अध्याय –4

मानवाधिकारों का ढांचा

मानवाधिकारों की विश्वव्यापी व्यवस्था

मानवाधिकारों की व्यवस्था सही मायने में अंतर्राष्ट्रीय रूप ले चुकी है। इससे एक नयी अंतर्राष्ट्रीय नैतिकता का जन्म हुआ है। चूंकि अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आम राय से बने हैं, इसलिए इन्हें पूरी दुनिया में मान्यता मिली हुई है।

यह आम सहमति अंतराष्ट्रीय स्तर पर पहले ही नैतिक मान्यता और/या कानूनी तौर पर लागू होने वाले समझौतों का रूप ले चुकी है। मानवाधिकारों और गरीबी उन्मूलन के बारे में राष्ट्रमंडल ने जो वक्तव्य प्रस्तुत किए हैं और जो शपथ ले रखी हैं, वे इन देशों की नीतिगत आंतरिक तथा अंतर्राष्ट्रीय वचनबद्धताओं को दर्शाते हैं। वैसे तो 'राष्ट्रमंडलीय मानवाधिकार' जैसी कोई चीज़ नहीं है, लेकिन इसके सदस्य देशों ने न सिर्फ संयुक्त राष्ट्र के समझौतों पर हस्ताक्षर कर रखे हैं, बल्कि वे यूरोपीय मानवधिकार समझौता, मानव एवं समुदाय के अधिकारों पर अफ्रीकी समझौता तथा अमेरीकी मानवाधिकार समझौता से उभरी क्षेत्रीय मानवधिकार व्यवस्थाओं के प्रति भी जवाबदेह हैं।

ये सब वचनबद्धताएं नीति–निर्माताओं के लिए सुपरिचित आधार बनने चाहिए। लेकिन नागरिकों के दैनिक जीवन में मानवाधिकार संबंधी मानदंडों के लगातार उल्लंघन; राष्ट्रमंडल तथा इन देशों के सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग में मानवाधिकारों की नैतिक अनिवार्यता और कानूनी बाध्यता के बारे में आम राय की कमी और नागरिकों को अधिकार संपन्न बनाने वाले वैकल्पिक ढांचे के बारे में जानकारी के न होने के कारण यह जरूरी हो जाता है कि राज्यों को नागरिकों के प्रति उनके उत्तरदायित्वों और इस संबंध में उनकी वचनबद्धता के बारे में बार–बार बताया जाए। खास तौर पर गरीबों को इस बारे में बताया जाना चाहिए, क्योंकि उनके पास जानकारी की उसी तरह कमी है जिस तरह अन्य भौतिक आवश्यकताओं की।

हालांकि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को मानवाधिकारों के महत्व का अहसास होने लगा है, लेकिन अधिक ज़ोर नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर ही दिया जा रहा है। सही है कि इन मानवाधिकारों पर विश्व भर में कड़ाई से अमल करने से गरीबी दूर करने में निश्चित

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

रूप से मदद मिलेगी, लेकिन यह भी ज़रुरी है कि सरकार और अंतर्राष्ट्रीय संगठन, जिनमें राष्ट्रमंडल भी शामिल है, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों को मान्यता दें और उन्हें लागू करें क्योंकि ये अधिकार स्वाभाविक रूप से मनुष्य की बुनियादी आवश्यकताओं से संबंधित हैं।

मानवाधिकारों की विश्वयापी व्यवस्था के कई घटक हैं। इनमें से वर्तमान ढांचे के तीन सबसे महत्वपूर्ण घटक हैं: विभिन्न स्तर जिन पर अधिकारों को परिभाषित और संरक्षित किया जाता है; अधिकारों का लाभ उठाने वाले और गारंटी देने वाले; और इन अधिकारों को लागू करने, इनकी देखरेख करने और इन पर कार्रवाई सुनिश्चित करने वाला तंत्र और तौर–तरीके।

अंतर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर

अधिकारों की विश्वव्यापी प्रणाली अंतर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित है। संयुक्त राष्ट्र के गठन के बाद से ही मानवाधिकारों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र (यूएन चार्टर) में तमाम मानवाधिकरों के संरक्षण और संवर्धन के बारे में सदस्य राष्ट्रों की बचनबद्धता प्रकट की गयी। संयुक्त राष्ट्र ने इस क्षेत्र में सन् 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को मंजूरी देकर पहल की थी। तब से अब तक सदस्य राष्ट्रों ने अनेक समझौतों को स्वीकार किया है और उनका अनुमोदन किया है। संयुक्त राष्ट्र ने आपस में संबद्ध संधि–संगठनों की एक जटिल व्यवस्था और मानवाधिकारों पर निगाह रखने वाली संस्थाओं का एक नेटवर्क कायम किया है। मानवाधिकारों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र के प्रमुख कार्यों में शामिल हैं: आम राय कायम करना, मानदंड निर्धारित करना, राष्ट्रों की क्षमता को बढ़ावा देना और इस बात की देखरेख करना कि राज्य किस सीमा तक विभिन्न समझौतों के तहत अपनी वचनबद्धता का निर्वाह कर रहे हैं। राज्यों द्वारा अपने ही नागरिकों के उत्पीड़न जैसी विशेष परिस्थितियों में संयुक्त राष्ट्र सीधे हस्तक्षेप भी कर सकता है, भले ही इसके लिए सशस्त्र सेना की ही आवश्यकता क्यों न पड़े। संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार उच्चायुक्त (UN High Commissioner for Human Rights) के 20 क्षेत्रीय कार्यालय हैं जो अधिकारों के संरक्षण पर निगरानी रखते हैं और तकनीकी सहायता उपलब्ध कराते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों संबंधी समझौतों और संस्थाओं का विकास यूरोपीय मानवधिकार समझौते (European Convention on Human Rights) पर आधारित व्यवस्था की स्थापना के साथ–साथ हुआ। इसे क्षेत्रीय स्तर पर मानवाधिकारों के संरक्षण का पहला प्रयास कहा जा सकता है। इस पर यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय (European Court of Human Rights) द्वारा अमल किया जाता है। तब से अब तक उत्तर और दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका में मानवाधिकारों संबंधी क्षेत्रीय व्यवस्थाएँ निर्मित की गयी हैं, हालांकि इन व्यवस्थाओं के अधिकार क्षेत्र और कार्यान्वयन के तौर–तरीके अलग अलग हैं। हाल में यूरोपीय सुरक्षा एवं सहकार संगठन (Organisation for Security and Cooperation in Europe) के तत्वाधान में एक अन्य 'क्षेत्रीय' व्यवस्था कायम की गई है जिसमें कनाडा भी शामिल है। इस संगठन ने मानवाधिकारों के बारे में राज्यों को समझा–बुझा कर राजी करने के तौर–तरीके विकसित किये हैं।

क्षेत्रीय व्यवस्था के कई फायदे हैं। इनसे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का बोझ काफी कम हो जाता है और ये मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले देश के पड़ोसी मित्र देशों द्वारा उस पर दबाब डलवा सकती हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण फायदा यह भी है कि ये व्यवस्थाएँ मानवाधिकारों के बारे में सरकारों का रवैया क्या हो, इस बारे में अपने क्षेत्र के सदस्य देशों की आम राय को दर्शाती हैं। एशिया–प्रशांत और ऑस्ट्रेलेशिया क्षेत्र में इस तरह के क्षेत्रीय संगठनों के न होने का कारण शायद यह है कि इन देशों में आम राय कायम नहीं हो पायी है। नतीजा यह हुआ है कि मानवाधिकार संबंधी क्षेत्रीय प्रणालियां एकसमान नहीं हैं। इस संबंध में यूरोप की क्षेत्रीय मानवाधिकार प्रणाली में सबसे अच्छा तालमेल है और वह निश्चित रूप से सबसे अधिक कारगर भी है।

तीसरा स्तर है, राष्ट्रीय स्तर। मानवाधिकार संबंधी मानदंडों को कानूनी जामा पहनाने के लिहाज से यह सबसे महत्वपूर्ण स्तर है। यह कार्य संवैधानिक गारंटियों और अनुपूरक कानूनों तथा अंतर्राष्ट्रीय या क्षेत्रीय समझौतों को लागू करके किया गया है। जहां मानवाधिकार संबंधी मानदंड स्वतः ही किसी देश के कानून का हिस्सा नहीं बनते, वहां एक बार संधि का अनुसमर्थन हो जाने पर वह देश अपने कानूनों को संधि के अनुसार बनाने को बाध्य होता है। लेकिन हस्ताक्षर के समय कभी कभी कुछ देश समझौते के एक–दो उपबंधों के बारे में

अपनी आपत्तिसंबंधी टिप्पणी के साथ अपनी स्वीकृति देते हैं और इस तरह समझौता आंशिक रूप से लागू हो जाता है। अधिकारों के उल्लंघन के अधिकतर मामले सबसे पहले राष्ट्रीय अदालतों या अन्य मानवाधिकार संस्थाओं में दायर किये जाते हैं। यही वह स्तर है जहां मानवाधिकारों की असली लड़ाई शुरू होती है और इसका प्रतिरोध भी शुरू होता है।

विभिन्न स्तरों को समझौतों की एक व्यवस्था के रूप में समन्वित किया जाता है जो राष्ट्रीय स्तर पर तो लागू होते हैं, मगर जिनपर निगरानी क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर होती है। इसके अलावा, राष्ट्रीय सरकारें और न्यायपालिकाएं क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों द्वारा की गयी अधिकारों की व्याख्या का सम्मान करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय संधियों में मानवाधिकारों को सम्मिलित किये जाने से मानवाधिकारों का दायरा बढ़ा है। इससे अंतर्राष्ट्रीय कानून के स्वरूप, उद्देश्य और कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण बदलाव आया है। इसने व्यक्ति और उसके अधिकारों को केन्द्रीय मुद्दा बना दिया है। कोई राज्य अपने नागरिकों से कैसा बरताव करता है, यह उसका आंतरिक मामला माना जाता था। राज्य की संप्रभुता (sovereignty) की अवधारणा से राज्यों को मानवाधिकार के हनन के मामले में बाहरी हस्तक्षेप से पूरी तरह सुरक्षा मिल जाती थी और यहां तक कि बाहर से कोई टिप्पणी भी नहीं की जा सकती थी। संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र के अनुसार राज्य की संप्रभुता और उसके घरेलू मामलों में बाहरी हस्तक्षेप न करना, अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की आधारशिला हैं। लेकिन समस्त मानवाधिकारों की रक्षा और उन्हें बढ़ावा देने की अनिवार्यता ने 'घरेलू' मामले की धारणा अब बदल दी है।

अपने नागरिकों के मानवाधिकारों का उल्लंघन करने वाले देशों की आलोचना करने के अन्य देशों, क्षेत्रीय व्यवस्थाओं और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के अधिकार को अब अधिकाधिक मान्यता मिलने लगी है। अक्सर जातीय संघर्षों के कारण गृहयुद्ध छिड़ने जैसी घटनाओं ने राज्यों के मामलों में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की भागीदारी बढ़ा दी है। यह भागीदारी मानवीय हस्तक्षेप के रूप में बड़े पैमाने पर तो अभिव्यक्त हुई ही है, कई अन्य रूपों में भी सामने आयी है, जैसे मध्यस्थता, सुलह–समझौता, मानवाधिकारों के लिए सम्मान बढ़ाने और इनके संवर्धन की राष्ट्रीय क्षमता को और सुदृढ़ करने, संधि के उत्तरदायित्वों के अनुपालन पर निगाह रखने और प्रतिबंध लगाने आदि के रूप में। उत्पीड़न और इसी तरह के अन्य अपराधों के लिए राष्ट्राध्यक्षों को किसी तरह की दण्डरक्षा न दिये जाने और अंतर्राष्ट्रीय अपराध न्यायालय (International Criminal Court) के गठन से इस प्रवृत्ति को और बढ़ावा मिला है।

अधिकारों के लाभार्थी

वैसे तो किसी देश में मानवाधिकर परम्परागत रूप से वहां के नागरिकों के लिए सीमित रहे हैं, लेकिन काफी बड़ी संख्या में देश अब गैर–राजनीतिक अधिकारों को अपने यहां रहने वाले सभी लोगों को देने लगे हैं। फिर भी बहुत से देशों के संविधानों में अब भी इनका दायरा सीमित है और प्रवासियों के साथ भेदभाव बरता जाता है। जहां तक अंतर्राष्ट्रीय समझौतों का सवाल है, उनका रवैया दोहरा रहा है। एक ओर तो वे कहते हैं कि केवल राजनीतिक अधिकार नागरिकों तक सीमित हैं, और दूसरी ओर, वे प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार दिलाने के बारे में व्यापक दृष्टिकोण अपनाने में असमर्थ लगते हैं। आज जब दुनिया में वैश्वीकरण का बोलबाला है तो अधिकारों को नागरिकों तक सीमित रखना, खास तौर पर जब नागरिकता की परिभाषा संकुचित जाति या नस्लों के आधार पर तय की जाती है–लोगों द्वारा अपने अधिकारों के उपयोग में बहुत बड़ी बाधा है।

जब तक अधिकार नागरिकता से जुड़े हुए थे, तब तक अधिकारों और दायित्वों संबंधी मानदंडों के बारे में एक सुनिश्चित अवधारणा मौजूद थी जो सब पर सटीक उतरती थी। लेकिन नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (International Covenant on Civil & Political Rights - आई सी सी पी आर) और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights - आई सी ई एस सी आर) को, जिसके तहत सबको मानवाधिकार प्रदान किए गए, मंजूरी मिलने के तुरंत बाद अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने खास व्यक्तियों के समूहों की ओर ध्यान देना प्रारंभ किया।

सामूहिक अधिकारों (group rights) की धारणा को कमज़ोर समुदायों, खास तौर पर अल्पसंख्यकों, के बारे में चिंता से बढ़ावा मिला। जातीय अल्पसंख्यकों, महिलाओं, बच्चों, आदिवासियों और प्रवासी मजदूरों के संरक्षण के लिए समझौते कायम किए गए। वैसे तो सामूहिक अधिकार मोटे तौर पर वही हैं जो इन दो समझौतों में बताए गए हैं, मगर ये पक्के तौर पर कार्रवाई करने, विशेष नीतियां बनाने, संरक्षण

देने वाले संगठन बनाने और नेटवर्किंग के लिए भी आधार उपलब्ध कराते हैं।

मानवाधिकारों की पुरानी परम्परा के अनुसार केवल व्यक्तियों को अधिकार प्राप्त हैं। जो लोग इस दृष्टिकोण को अपनाते हैं, उन्हें सामूहिक अधिकारों को लेकर बेचैनी होती है। इसी से विकास के अधिकार जैसे नये विचारों को लेकर प्रतिरोध भी उत्पन्न होता है। मगर बहुजातीय समाजों में सामूहिक अधिकारों की धारणा ने खास महत्व हासिल कर लिया है। फीजी जैसे कुछ देशों के मामले में तो इसने समाज को संगठित करने वाले ताने–बाने का रूप ले लिया है।

अधिकतर वैधानिक प्रणालियों में निगमों और इसी तरह की अन्य संस्थाओं को भी ऐसे 'मानव' अधिकार दिये गये हैं जो उनके लिए अहमियत रखते हैं और जिन्हें वे इस्तेमाल कर सकते हैं। लेकिन आलोचक शिकायत करते हैं कि निगमों को मानवाधिकार दिया जाना इस अवधारणा का दुरुपयोग है।

कर्तव्यधारक

राज्य को परम्परागत रूप से मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए उत्तरदायी संस्था के रूप में देखा जाता रहा है। इसके प्रमुख दायित्वों में मानवाधिकारों का सम्मान करना, उनको बढ़ावा देना, उनका संरक्षण करना और *तमाम* मानवाधिकारों के उद्‌देश्य को प्राप्त करना शामिल हैं। *मानवाधिकरों के सम्मान* के लिए जरूरी है कि राज्य ऐसे आचरण न करें जिससे लोग अपने अधिकारों से वंचित रह जाते हैं, जैसे अत्याचार, अल्पसंख्यक संस्कृति के स्कूलों को बंद करना या मनमाने तरीके से लोगों की बोलने की या मुक्त रूप से आने जाने की आज़ादी पर पाबंदी लगाना। *अधिकारों के प्रति सम्मान को बढ़ावा देने* के तहत मानवाधिकारों की शिक्षा को बढ़ावा देना और मानवाधिकारों को समर्थन देने वाली संस्थाओं जैसे मानवाधिकार आयोग को मदद देना आदि गतिविधियां आती हैं। यह सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं का उत्तरदायित्व है।

अधिकारों के संरक्षण के दायित्व के तहत राज्य से अपेक्षा की जाती है कि वह सार्वजनिक अधिकारियों या अन्य व्यक्तियों और समूहों द्वारा मानवाधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ लोगों की रक्षा करे। आपराधिक कानून का अधिकतर हिस्सा इसी दायित्व पर आधारित है। इसे पूरा करने के लिए राज्य को कारगर तरीके से कानून और व्यवस्था की हिफ़ाज़त करनी चाहिए। इसके उदाहरणों में पुलिस बल को मानवाधिकारों के बारे में प्रशिक्षित करना, सुचारु रूप से काम करने वाली और पर्याप्त संसाधन–संपन्न स्वतंत्र न्यायपालिका तथा मानवाधिकार आयोग की व्यवस्था करना, अन्य लोगों के अधिकारों का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कारगर प्रतिबंध लगाना, पर्यावरण के संरक्षण के लिए कानून बनाना और दवाओं और औषधियों की बिक्री तथा उपयोग के बारे में कायदे–कानून बनाना शामिल हैं। इस दायित्व को पूरा करने के लिए जरूरी है कि राज्य के संरक्षित वन–क्षेत्र या ज़मीन जिस पर जनसमुदाय परम्परागत रूप से रहते आये हैं, उन्हें वहाँ से बेदख़ल न किया जाए।

अधिकारों को पूरा करने की ज़िम्मेदारी का मतलब है कि राज्य यह सुनिश्चित करे और आवश्यक कदम उठाये कि जिन लोगों की पहुंच अधिकारों तक नहीं है, वे भी इनका लाभ उठा सकें। स्वास्थ्य, शिक्षा और आहार, मुफ़्त कानूनी सहायता सेवा आदि के लिए सब्सिडी, बेघर लोगों को अपना मकान बनाने के लिए रियायती दर पर जमीन और निर्माण–सामग्री उपलब्ध कराना तथा अन्य रचनात्मक नीतियां अपना कर मानवाधिकारों के लक्ष्य को प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

चूंकि मानवाधिकार प्रणाली राज्य के दायित्वों पर आधारित है, इस व्यवस्था से वे गैर–सरकारी तत्व जिनके कामकाज का असर मानवाधिकारों पर पड़ता है–परे रह जाते हैं। मानवाधिकारों को लागू करने के बारे में अधिकतर कानूनी कार्रवाई राज्यों द्वारा अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित होती है। लेकिन अब मानवाधिकार प्रणाली उन शक्तिशाली गैर–सरकारी तत्वों को अपने दायरे में लाने की कोशिश कर रही है जिनके क्रियाकलापों के कारण गरीबी पैदा होती है या सामाजिक उपलब्धियाँ उलट जाती हैं। मानवाधिकार व्यवस्था निजी क्षेत्र, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं और अन्य राज्यों को (जिनकी किसी देश, देशों के मानवाधिकार की परिस्थितियों में विशेष रूप से रुचि हो) अपने साथ लेकर चलने का प्रयास कर रही है। लेकिन इन संगठनों का दायित्व ठीक–ठीक क्या होगा, यह स्पष्ट होना अभी बाकी है।

कार्यान्वयन और निगरानी

अधिकारों को लागू करने का कार्य मुख्य रूप से राज्य की ज़िम्मेदारी है। इन्हें लागू करने वाली संस्थाएं प्राथमिक तौर पर राष्ट्रीय स्तर की होती हैं। आम बात यह है कि अधिकार न्यायिक प्रक्रिया के माध्यम से अदालतों द्वारा कार्यान्वित किये जाते हैं। हाल के वर्षों में अन्य संस्थाएं, जैसे लोक–आयुक्त (Ombudsman), मानवाधिकार आयोग या समानता आयोग अतिरिक्त संरक्षण देने वाली संस्थाओं के रूप में स्थापित हुए हैं। ये अदालतों के मुकाबले कुछ कम प्रतिद्वंद्विता वाली प्रक्रिया अपनाते हैं और मध्यस्थता व सुलह–समझौते का प्रयास करते हैं। इन संस्थाओं तक पहुंचना अदालतों के मुकाबले अधिक आसान व सस्ता है और इसमें औपचारिकताएं भी कम हैं। ये संस्थाएं कई तरह के कार्य करती हैं और मानवाधिकारों के बारे में सूचना तथा शिक्षा देना भी इनके काम के दायरे में आता है। ये मानवाधिकारों की राष्ट्रीय स्तर पर स्थिति की भी निगरानी कर सकते हैं और वार्षिक तथा खास विषयों पर आधारित रिपोर्ट तैयार करती हैं। मगर मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामलों का निपटारा करने की ज़िम्मेदारी अंतिम रूप से अदालतों की होती है और मानवाधिकार संबंधी प्रावधानों की व्याख्या भी वही करती हैं।

जो देश मानवाधिकार संबंधी किसी क्षेत्रीय व्यवस्था के सदस्य हैं, उनके यहां क्षेत्रीय आयोग या अदालतें महत्वूपर्ण पूरक–भूमिका निभा सकती हैं। यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय की भूमिका इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यूरोपियन कन्वेंशन की व्याख्या अंतिम रूप से उसी के द्वारा की जाती है और राष्ट्रीय सरकारों व अदालतों को उन्हें मानना पड़ता है। जो देश क्षेत्रीय व्यवस्था के सदस्य हैं, उनके लिए क्षेत्रीय स्तर पर निगरानी का काम भी किया जाता है।

अधिकारों को लागू करने में अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की बहुत कम भूमिका है। फिर भी, हाल में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यान्वयन की दिशा में कुछ कदम उठाये गये हैं। इसके लिए भूतपूर्व यूगोस्लाविया और रवांडा में युद्धसंबंधी अपराधों की सुनवाई के लिए न्यायाधिकरण गठित किया गया है और सन् 1998 में रोम में हुए समझौते के तहत शीघ्र ही अंतर्राष्ट्रीय अपराध–न्यायालय की स्थापना की जानी है।

इसके बावजूद, अधिकारों के संरक्षण और कार्यान्वयन की निगरानी के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली महत्वपूर्ण, या और स्पष्ट शब्दों में कहें तो संभावित रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। निगरानी के दो रूप होते हैंः एक तो मूलतः राजनीतिक है और संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग व इससे संबद्ध प्रणाली के दायित्व के अंतर्गत आता है। इसका उदाहरण है विशेष निरीक्षक (Special Rapporteurs) जो समस्याग्रस्त देशों पर कड़ी निगाह रखते हैं और आयोग को जानकारी देते है। इसके अलावा गैर–न्यायिक हत्याओं, गुमशुदगी और महिलाओं के खिलाफ हिंसा जैसे विशेष क्षेत्रों में जांच पड़ताल कर जानकारी देते हैं। दूसरा रूप कुछ अधिक 'न्यायिक' है और यह कार्य विशेषज्ञों, स्वतंत्र समितियों–जैसे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार समिति (Committee on Economic, Social and Cultural Rights) द्वारा किया जाता है। इस समिति की नियुक्ति मानवाधिकार समझौतों के तहत मानवाधिकारों के बारे में राज्यों की वचनबद्धता की पूर्ति की निगरानी के लिए की जाती है। इसके अलावा जहां वैकल्पिक आचार–नियम (Optional Protocol) होते हैं – जैसा कि हाल में महिलाओं के प्रति हर तरह का भेदभाव समाप्त करने संबंधि समझौता (Convention on the Elimination of All forms of Discrimination Against Women - सी ई डी ए डब्ल्यू) के तहत बनाया गया है, वहां व्यक्ति और कभी कभी राज्य जैसे हर तरह के जातीय भेदभाव की समाप्ति करने संबंधी समिति (Convention on the Elimination of All forms of Racial Discrimination - सी ई आर डी) की तरह की समितियों के समक्ष शिकायतें सुनवाई के लिए ला सकते हैं। सी ई आर डी के तहत अगर राज्य मध्यस्थता के जरिए समस्या को सुलझाने में विफल रहते हैं तो दोनों में से कोई भी मामले को अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (International Court of Justice) में भेज सकता है। वे इनका फैसला मानने को बाध्य होंगे।

अधिकतर प्रमुख समझौतों में राज्यों द्वारा समितियों को समय–समय पर रिपोर्ट पेश करने की व्यवस्था है। यही वह मुख्य साधन है जिसके जरिए संधि के प्रति किसी राज्य की वचनबद्धता के बारे में उसके कार्यनिष्पादन पर निगाह रखी जाती है। जहां शिकायत की प्रक्रिया निर्धारित है, वहां भी संस्था के फैसले पर कड़ाई से अमल नहीं हो पाता, हालांकि इससे समिति को समझौते के प्रावधानों की व्याख्या करने, संरक्षित अधिकारों का दायरा बताने तथा उल्लंधन की सीमा बताने का मौका मिल जाता है। मानवाधिकारों के बारे में आई सी सी पी आर के अंतर्गत गठित संयुक्त राष्ट्र की समिति के कार्यों का यह एक खास तौर से महत्वपूर्ण पहलू है। बच्चों के अधिकारों के

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

संयुक्त राष्ट्र के साथ कार्यकलाप

गैर–सरकारी संगठन सरकारों की निगरानी के तौर पर और समझौते संबंधी समितियों को अपनी नीति तैयार करने के काम में मदद के उद्देश्य से उनके समक्ष अपना पक्ष उपयोगी तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

कनाडा में गरीबी उन्मूलन संबंधी गैर–सरकारी संगठनों में से एक ने सन् 1998 में सी ई एस सी आर के समक्ष कुछ विचार प्रस्तुत किए। यह रिपोर्ट कनाडा में अकेली माताओं जैसे नाजुक समूहों के उपयुक्त जीवन स्तर के अधिकार पर सामाजिक सुरक्षा कानून को रद्द किये जाने के असर के बारे में थी। कनाडा सरकार के उत्तर पर विचार के बाद समिति ने निष्कर्ष निकाला कि संबंधित कानून को रद्द करने से ''कनाडा में वंचित वर्गों के नैतिक, राजनैतिक तथा सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं में प्रमाणित अधिकारों पर कई तरह के बुरे असर पड़े हैं।'' इसमें आगे कहा गया है कि ''समिति को इस बात का खेद है कि सामाजिक अधिकारों के बारे में प्रांतीय सरकारों को बेरोक–टोक विवेकाधिकार देकर कनाडा सरकार ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिस से प्रसंविदाओं के मानदंड कमज़ोर पड़ सकते हैं और प्रभावी उत्तरदायित्व में भारी कमी आयी है।''[197] इसमें कनाडा की प्रांतीय सरकारों की इस बात के लिए भी आलोचना की गयी है कि उन्होंने अदालतों मे चल रहे मुकदमों में अपनी दलीलों में कनाडा में अधिकारों और स्वतंत्रताओं के घोषणापत्र की इस तरह व्याख्या की जिससे जिन लोगों के सामाजिक और आर्थिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ था, वे न्यायिक प्रतिकार से वंचित रहे; और यह तर्क भी दिया कि आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को ''सिद्धांतों और उद्देश्यों'' के निचले स्तर पर नहीं लाना चाहिए।

समझौते (Child Rights Convention - सी आर सी) के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र बालकोष (यूनिसेफ) और संयुक्त राष्ट्र की अन्य एजेंसियां समीक्षा तथा सिफारिश करने के कार्य में मदद करती हैं।

अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की निगरानी वाली भूमिका की पूरी क्षमता का उपयोग अभी नहीं हो पा रहा है। अब तक संयुक्त राष्ट्र और संधि संगठनों को सीमित संसाधन उपलब्ध कराये गये हैं। इनमें से बहुत से तो साल में केवल एक या दो बार ही एक पखवाड़े या लगभग इतने ही दिनों की बैठक कर पाते हैं। उनके पास पर्याप्त सचिवालयी सहायता भी उपलब्ध नहीं है और अनुपालन के लिए तो कोई व्यवस्था ही नहीं है।

राष्ट्रमंडल के पास हरारे घोषणा के सिद्धांतों के ''गंभीर और लगातार'' उल्लंघन से निपटने के लिए एक प्रणाली है जिसके अंतर्गत मानवाधिकारों संबंधी तमाम अंतर्राष्ट्रीय मानदंड आ जाते हैं। राष्ट्रमंडल देशों के मंत्रिस्तरीय कार्य दल (Commonwealth Ministerial Action Group) चक्रानुक्रम में विदेश मंत्रियों का एक समूह है जो अपने कार्यक्षेत्र की बड़ी सीमित व्याख्या करता है। यह असंवैधानिक तरीके से लोकतांत्रिक सरकार का तख्ता पलटे जाने की स्थिति में ही कार्रवाई करता है। कभी कभी इसने अन्य मामलों में भी कार्रवाई की है, जैसे कि गाम्बिया के मामले में उसने इस देश का निरीक्षण किया था। इस दल के द्वारा उठाये जाने वाले कदमों में सामूहिक अस्वीकृति से लेकर देश की सदस्यता समाप्त करने जैसे उपाय शामिल हैं। राष्ट्रमंडल मंत्रियों के कार्य दल के कार्यक्षेत्र की इस समय राष्ट्रमंडल उच्चस्तरीय समीक्षा–दल द्वारा समीक्षा की जा रही है।

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की सारवस्तु

मानवाधिकारों की इस तरह व्याख्या करना कि वे नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार तथा सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकारों की दो अलग धाराओं में बंटे हुए हैं उनकी भ्रामक व्याख्या करना होगा। आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि प्रत्येक अधिकार दूसरे अधिकार से जुड़ा हुआ है और सभी अधिकार एक सम्पूर्ण समग्रता का निर्माण करते हैं। लेकिन इस खंड में हम उन अधिकारों का जिक्र नहीं करेंगे जो मुख्य रूप से नागरिक और राजनीतिक किस्म के हैं क्योंकि ये सुपरिचित हैं और सी एच आर आई की पिछली रिपोर्टों में इनका विश्लेषण किया जा चुका है। यहां यह कहना पर्याप्त होगा कि वे किसी आदमी की व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं और भौतिक सुरक्षा, अभिव्यक्ति और विश्वास की स्वतंत्रता, सार्वजनिक मामलों में भाग लेने के राजनीतिक अधिकार, संघ बनाने और उन्हें संचालित करने के अधिकार, समानता के अधिकार, और कानून की विधिसंगत प्रक्रिया

cyan black

आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार–बुनियादी मानदंड

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा और आई सी सी पी आर के साथ–साथ, आई सी ई एस सी आर अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार प्रणाली में शामिल है। इनका पालन सभी हस्ताक्षर करने वाले देशों को करना पडता है। आई सी ई एस सी आर वर्ष 1966 में पारित किया गया था, परन्तु न्यूनतम अपेक्षित 35 देशों की अभिपुष्टि के बाद इसे 1976 में लागू किया गया। बाद में इसे अन्य कई और देशों की स्वीकृति भी मिली। दक्षिण एशिया में पाकिस्तान, भूटान और मालद्वीप ने अभी तक इस प्रसंविदा पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं।

आई सी ई एस सी आर में निम्नलिखित सामाजिक–आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारो के बुनियादी मानदंड निर्धारित किए गए हैं।[201] इनकी प्राप्ति को सुनिश्चित करना राज्यों का कर्त्तव्य है। उनकी यह ज़िम्मेदारी भी है कि वे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार समिति (सी ई एस सी आर) को आवधिक रिपोर्ट प्रस्तुत करें क्योंकि यह समिति समझौते पर हस्ताक्षर करने वाले देशों में इन अधिकारों के कार्यान्वयन के सम्बन्ध में हुई प्रगति पर नज़र रखती है।

काम का अधिकार (अनुच्छेद 6)

- प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार चुने/स्वीकृत काम के माध्यम से जीविका कमाने का अधिकार है।

राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह तकनीकी एवं व्यावसायिक मार्गदर्शन और प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा नीतियाँ उपलब्ध कराने के लिए कदम उठाये ताकि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास अबाध रूप से हो सके। राज्य का यह भी दायित्व बनता है कि हर एक को पूर्ण एवं उत्पादनकारी रोज़गार उपलब्ध कराते समय उसकी मौलिक राजनीतिक व आर्थिक स्वतंत्रताओं का संरक्षण करें।

काम से जुड़े हुए अधिकार (अनुच्छेद 7)

- प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि उसे काम करने का उचित व अनुकूल माहौल मिले जिसमें शामिल हैं–
  - ❖ सभी कामगारों को न्यायोचित मज़दूरी।
  - ❖ बिना किसी भेदभाव के समान मूल्य के काम का समान पारिश्रमिक।
  - ❖ महिलाओं को समान मूल्य के काम पर समान मज़दूरी तथा उनके काम करने का वातावरण पुरुषों के समतुल्य होना।
  - ❖ अपना तथा अपने परिवार के समुचित निर्वाह के अवसर।
  - ❖ काम करने के लिये सुरक्षित एवं स्वस्थ माहौल।
  - ❖ सबको अपने रोज़गार में वरिष्ठता व योग्यता के आधार पर उच्चतर स्तर पर बढ़ने के समान अवसर।
  - ❖ आराम, अवकाश और काम के समय की उचित सीमा तथा नियतकालिक छुट्टियों के भुगतान के साथ–साथ सार्वजनिक छुट्टियों के लिए पारिश्रामिक।

काम से उपजे हुए अधिकार (अनुच्छेद 8)

- प्रत्येक व्यक्ति को स्वेच्छा से मज़दूर संघ बनाने या उसमें शामिल होने का अधिकार है।
- देश के कानूनों के तहत हड़ताल करने का अधिकार है।
- मज़दूर संघों को राष्ट्रीय महासंघ बनाने और उन्हें स्वेच्छा से चलाने का अधिकार है बशर्ते कि वह कानून द्वारा उल्लिखित उन सीमाओं में काम करें जो लोकतांत्रिक समाज में लोक–व्यवस्था और राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में आवश्यक हैं या दूसरों के अधिकार व स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए अनिवार्य हैं। राष्ट्रीय महासंघ को अंतर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठनों से जुडने का अधिकार होगा।

सामाजिक सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद 9)

- प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है।

परिवार के प्रति राज्य का दायित्व (अनुच्छेद 10)

- राज्य को चाहिए कि वह समाज की स्वाभाविक और मौलिक इकाई – परिवार को अधिकतम सुरक्षा व सहायता दे।

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

- बच्चे के जन्म से पहले और बाद में माता की समुचित अवधि तक विशेष सुरक्षा की जानी चाहिए। काम करने वाली महिलाओं को इस अवधि के दौरान सवेतन छुट्टी या पर्याप्त सामाजिक–सुरक्षा लाभों के साथ छुट्टी दी जानी चाहिए।
- बच्चों को शोषण से बचाना चाहिए तथा भेदभाव किए बिना सहायता पहुँचानी चाहिए। हानिकारक व जोखिमपूर्ण कामों मे बाल–श्रमिकों का उपयोग करने वाले के विरूद्ध दण्डनीय कार्यवाही होनी चाहिए। आयुसीमा निर्धारित की जानी चाहिए ताकि कम आयु के बच्चों को रोज़गार देना निषिद्ध व कानूनन् दण्डनीय हो सके।

समुचित जीवन स्तर का अधिकार (अनुच्छेद 11)

- प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिए और अपने परिवार के लिए समुचित जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार है जिसमें शामिल हैं – रोटी, कपड़ा और मकान तथा निरन्तर बेहतर होती जीवन की परिस्थितियाँ।
- प्रत्येक व्यक्ति को भूख से मुक्त रहने का अधिकार है।

राज्य का कर्त्तव्य है कि वह स्वयं तथा अंतर्राष्ट्रीय सहायता द्वारा लोगों को पौष्टिकता के संबंध में जानकारी प्राप्त कराये और आहार के उत्पादन, संरक्षण एवं वितरण के तरीकों में सुधार लाये। यह लक्ष्य प्राप्त करने के लिए राज्य का दायित्व बनता है कि वह कृषि व्यवस्था में सुधार करे ताकि प्राकृतिक संसाधनों का सबसे बेहतर उपयोग किया जा सके।

स्वास्थ्य का अधिकार (अनुच्छेद 12)

- प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम प्राप्य स्तर को हासिल करने का अधिकार है।

राज्य का कर्त्तव्य है कि वह मातृ–प्रसव और नवजात शिशु की मृत्युदर को कम करने हेतु कदम उठाये तथा बच्चे के स्वास्थ्य के विकास को सुनिश्चित करे। राज्य का यह कर्त्तव्य भी है कि वह पर्यावरण और औद्योगिक स्वच्छता के सभी पहलुओं में सुधार करने, महामारी, विशेषक्षेत्री बीमारी, व्यावसायिक व अन्य बीमारियों से बचाव, उनकी रोकथाम व उपचार को सुनिश्चित करने तथा ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करने के लिए कदम उठाये जिससे प्रत्येक रोगी व्यक्ति को उचित चिकित्सा व देखभाल मिले।

शिक्षा का अधिकार (अनुच्छेद 13 और 14)

- प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है।
- प्राथमिक शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य व निःशुल्क होगी।

राज्य का कर्त्तव्य है कि वह एक विस्तृत कार्य–योजना बनाये व अपनाये जिससे निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा के अधिकार की प्राप्ति तर्कसंगत अवधि में संभव हो सके। उक्त अवधि का निर्धारण कार्य–योजना में ही होगा। राज्य का कर्त्तव्य है कि वह सभी के लिए उनकी योग्यता के आधार पर माध्यमिक शिक्षा (तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा सहित) और उच्चतर शिक्षा की निःशुल्क व्यवस्था कराये।

राज्य का कर्त्तव्य है कि हर शैक्षणिक स्तर पर विद्यालयों का विकास सुनिश्चित करे, शिक्षावृत्ति की पर्याप्त व्यवस्था बनाए और शिक्षकों के रहन–सहन संबंधी मामलों में निरंतर सुधार लाये।

राज्य का कर्त्तव्य है कि वह माता–पिता की अपने बच्चे के लिए उन विद्यालयों को चुनने की स्वतन्त्रता का सम्मान करे जो राज्य द्वारा समय–समय पर निर्धारित न्यूनतम शैक्षिक मानकों को पूरा करते हैं। अपने मतानुसार अपने बच्चों की धार्मिक व नैतिक शिक्षा सुनिश्चित कराने के माता–पिताओं के अधिकार का सम्मान करना राज्य का दायित्व है।

सांस्कृतिक अधिकार (अनुच्छेद 15)

- प्रत्येक व्यक्ति को सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को वैज्ञानिक उन्नति व उसके व्यावहारिक लाभों का उपभोग करने का अधिकार है।
- लेखकों, वैज्ञानिकों, कलाकारों इत्यादि के कापीराईट और पेटेंट अधिकारों की सुरक्षा राज्य द्वारा की जानी चाहिए।

राज्य का कर्त्तव्य है कि वह वैज्ञानिक अनुसंधान व सृजनात्मक कार्यों के लिए जरूरी स्वतंत्रता को कायम रखे।

का संरक्षण करते हैं। यहां मुख्य जोर आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की बहुआयामी व्यवस्था पर है। एक महत्वपूर्ण और स्वतः सिद्ध और स्पष्ट बात यह है कि ये अधिकार अपने आप में नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के कुछ पहलुओं को भी समेटे हुए हैं।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर

संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र की प्रस्तावना में आर्थिक और सामाजिक प्रगति और स्वतंत्रता के व्यापक परिप्रेक्ष्य में जीवन के बेहतर स्तर तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के उपयोग के प्रति सदस्यों को वचनबद्ध करती महासभा (General Assembly) पर इस बात का दायित्व है कि वह आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य के क्षेत्र[199] में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देगी।[200] संयुक्त राष्ट्र पर भी यह सामान्य उत्तरदायित्व है कि वह जीवन के उच्चतर स्तर, पूर्ण रोज़गार और आर्थिक व सामाजिक प्रगति व विकास की स्थितियों को बढ़ावा देगा। मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा की प्रस्तावना में एक लक्ष्य ''भय और अभाव'' से मुक्ति का भी रखा गया है।[201]

इस घोषणा पत्र के कई प्रावधानों में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को व्यक्ति की गरिमा और उसके व्यक्तित्व के मुक्त विकास के लिए अनिवार्य बताया गया है। इसमें प्रत्येक व्यक्ति के काम के अधिकार को मान्यता देने के साथ साथ न्यायोचित और समुचित वेतन देने, अपने और अपने परिवार के लिए मानवीय गरिमा के अनुकूल जीवन तथा जरूरत होने पर अन्य सामाजिक सुरक्षाएं उपलब्ध कराने की बात कही गयी है।[202] अनुच्छेद–25 में प्रत्येक व्यक्ति और उसके परिवार के कल्याण के लिए उचित जीवन स्तर के अधिकार के साथ–साथ आहार, कपड़ा, आवास और चिकित्सा सुविधा, सामाजिक सेवाओं; बेरोज़गारी, बीमारी, अक्षमता, वैधव्य, वृद्धावस्था और अपाहिज होने की स्थिति में रोज़गार न रहने पर सुरक्षा के अधिकार को मान्यता प्रदान की गयी है। प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का भी अधिकार दिया गया है जिससे कि उसके व्यक्तिव का पूर्ण विकास हो और मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के प्रति आदर की भावना सुदृढ़ हो।[203] अंत में घोषणा पत्र में यह बात स्वीकार की गयी है कि प्रत्येक व्यक्ति को समाज के सांस्कृतिक जीवन में मुक्त रूप से भाग लेने, कलाओं का आनंद लेने और वैज्ञानिक प्रगति तथा इसके लाभों में भागीदार बनने का अधिकार है।[204] परिवार को, जो कि ''समाज की स्वाभाविक और मौलिक इकाई'' है, राज्य और समाज से संरक्षण पाने का अधिकार है।[205] घोषणा पत्र की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें लिंग, जाति या सामाजिक उद्‌गम का भेदभाव किए बिना सभी लोगों की समानता की बात कही गयी है। संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों ने अपने आप को ऐसी सामाजिक और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के प्रति वचनबद्ध किया है जिसमें इन तथा अन्य अधिकारों को साकार किया जा सके।[206] आई सी ई एस सी आर समझौते पर हस्ताक्षर करने वाले तमाम देशों ने इन संकल्पों का विस्तार किया है और इन्हें अनिवार्य रूप से लागू करने योग्य बनाया है। इन अधिकारों का व्यापक परिप्रेक्ष्य आत्म–निर्णय में है जिसके बल पर समस्त जन ''स्वतंत्र रूप से अपना राजनीतिक दर्जा निर्धारित कर सकते हैं और मुक्त रूप से आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास का रास्ता अपना सकते हैं।[207]

विकास के अधिकार के बारे में संयुक्त राष्ट्र की घोषणा (UN Declaration on the Right to Development) में कहा गया है कि ''विकास का अधिकार एक ऐसा अधिकार है जिसे मनुष्य से अलग नहीं किया जा सकता। इसी के बल पर प्रत्येक मनुष्य और जन आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास में भागीदार बन सकते हैं, उसमें योगदान कर सकते हैं और इसका आनंद उठा सकते हैं, इसी से वे सभी मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं का पूरी तरह लाभ उठा सकते हैं।''[208] इसमें यह भी कहा गया है कि मनुष्य ''विकास का केन्द्र बिन्दु है और उसे विकास के अधिकार में सक्रिय भागीदारी करने के साथ–साथ इसका भरपूर लाभ भी उठाना चाहिए''।[209] हालांकि सभी मनुष्यों की विकास के प्रति ज़िम्मेदारी बनती है, लेकिन राज्यों का यह अधिकार और कर्तव्य है कि वह उपयुक्त राष्ट्रीय विकास नीति बनाए जिससे तमाम आबादी और समस्त लोगों के कल्याण में वृद्धि हो। विकास में सक्रिय, स्वतंत्र और उद्‌देश्यपूर्ण तरीके से भाग लेकर और इससे होने वाले फायदों के उचित वितरण का वे लाभ उठाएं।''[210]

कुछ पश्चिमी देशों की सरकारों ने विकास के अधिकार को सही परिप्रक्ष्य में नहीं समझा है। लेकिन विकास के अधिकार की घोषणा करने वाला दस्तावेज विकास की व्यापक और मानववादी परिभाषा देने के लिहाज से बड़ा महत्वपूर्ण है। इसके अनुसार यह एक ''व्यापक

विकास का अधिकार – संक्षेप में

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने विकास के अधिकार के घोषणापत्र को 1986 में अपनाया। 1998 में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (UN Commission on Human Rights) की सिफारिशों के आधार पर आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् ने एक अनुवर्ती प्रणाली को रूप देते हुए एक कार्यदल का गठन किया। यह कार्यदल अपनी वार्षिक बैठक में विकास के अधिकार को साकार करने में सदस्य देशों के प्रयास और उपलब्धियों की समीक्षा करता है। संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार उच्चायुक्त (UN High Commissioner for Human Right) द्वारा नियुक्त एक स्वतन्त्र विशेषज्ञ (इस समय प्रो. अर्जुन सेनगुप्ता) ने विचार–विमर्श के लिए तथा इस अधिकार के कार्यान्वयन हेतु अन्य सिफारिशों को कार्यदल के प्रत्येक सत्र में प्रस्तुत किया है। मानवाधिकार उच्चायुक्त उन देशों को तकनीकी सहायता देता है जो अपने नागरिकों के विकास के अधिकार को कार्यन्वित करने के लिए कार्यदल की सहायता चाहते हैं। कार्यदल का कार्यकाल वर्ष 2004 तक बढ़ा दिया गया है। स्वतन्त्र विशेषज्ञ द्वारा प्रस्तुत की गई आवधिक रिपोर्टों के आधार पर विकास के अधिकार के मूल सिद्धांत का सार इस प्रकार है।[211]

विकास का अधिकार –

- लोगों का अपने प्राकृतिक संसाधनों पर पूर्ण प्रभुत्व के अभिन्न अधिकार को स्वीकारता है;
- विकास हेतु समान अवसर को स्वीकारता है जो व्यक्ति व राष्ट्र दोनों के लिए लाभपूर्ण है;
- भेदभाव के बिना, निष्पक्ष रूप से विकास के अधिकार पर आधारित प्रणाली को अपनाता है। विकास की प्रक्रिया में पारदर्शिता होनी चाहिए; कर्तव्यधारकों को अपने काम के प्रति जवाबदेह बनना चाहिए और विकास के मामलों में निर्णय लेने की एवं कार्यान्वयन की प्रक्रिया में लोगों की सूचना–संपन्न भागीदारी होनी चाहिए तथा विकास के लाभ सबको न्यायसंगत रूप से मिलने चाहिए।
- विकास की प्रक्रिया ऐसी हो जिसके अंतर्गत सभी मानवाधिकार समान रूप से न कि अलग–थलग तरीके से साकार हों। विकास के अधिकार में प्रगति का दावा उन परिस्थितियों में नहीं किया जा सकता जहां एक या अधिक राजनीतिक अधिकारों का हनन हुआ हो; या फिर एक अधिकार की पूर्ति के लिए अन्य अधिकारों पर अंकुश लगाया गया हो जैसे – अन्न के अधिकार या स्वास्थ्य के अधिकार को पाने के लिए शिक्षा के अधिकार को किनारे कर दिया गया हो। नागरिक को प्राप्त किसी भी मानवाधिकार में किसी भी स्तर पर कोई भी विकृति नहीं होनी चाहिए;
- प्रत्येक राज्य को विकासात्मक नीतियों को सूत्रबद्ध करने का अधिकार व कर्त्तव्य प्रदान करता है। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के अन्य कर्ताओं का कर्त्तव्य इस प्रक्रिया में निम्नलिखित रूप से सहायता देना है–
    - ❖ विकास के अधिकार की प्राप्ति के लिए मिल–जुलकर अनुकूल अंतर्राष्ट्रीय वातावरण बनाना;
    - ❖ विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं को आपसी सहयोग द्वारा दूर करना;
    - ❖ अंतर्राष्ट्रीय विकासात्मक नीतियों को सूत्रबद्ध करने के लिए ऐसे कदम उठाना जिससे विकास के अधिकार की पूर्ण प्राप्ति में सहायता मिले;
- सभी नागरिकों को व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से विकास की ज़िम्मेदारी सौंपता है जिसमें मानवाधिकार और मौलिक स्वतंत्रता और साथ ही साथ समुदाय के प्रति उनके कर्त्तव्यों का ध्यान रखा जाता है। उन्हें विकास को बढ़ावा देने और संरक्षण देने के लिए एक उपर्युक्त राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था बनानी होगी;
- विकासशील देशों और विकसित देशों व दाता (डोनर) एजेंसियों के बीच विकास के समझौते की परिकल्पना करना, जिसमें विकास के अधिकार की पूर्ण प्राप्ति के लिए कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की ज़िम्मेदारी विकासशील देशों पर होगी। विकसित देशों व दाता एजेंसियों की ज़िम्मेदारी होगी कि वे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वित्त सम्बंधी सभी भेदभाव पूर्ण नीतियों और बाधाओं को दूर करें तथा विकासात्मक नीतियों को लागू करने में हुए अतिरिक्त खर्चे के भार को बाँट लें।

आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य समस्त जनसंख्या और प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण में सुधार लाना है'' ताकि ''समस्त मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं का लाभ उठाया जा सके''। यह अधिकारों के विभिन्न सूत्रों के बीच तालमेल कायम करने के लिए एक आधार प्रदान करता है और ऐसी स्थितियों की ओर संकेत करता है जिसमें सब प्रकार के अधिकारों को पाया जा सके।

लेकिन यह भी ज़रूरी है कि इस अधिकार के प्रति उत्साह को नियंत्रण में रखें, क्योंकि इसे कई ऐसे देशों ने बढ़ावा दिया है जिनकी मानावाधिकारों के बारे में वचनबद्धता संदिग्ध है। इसकी विस्तृत रूपरेखा का उपयोग मानवाधिकार सुनिश्चित करने के राष्ट्रों के दायित्व से बचने या उसे भुलाने में आसानी से किया जा सकता है। इस तरह मानवाधिकारों के संरक्षण में असफलता के लिए किसी और कारण को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है और मानवाधिकारों के पालन संबंधी राष्ट्रीय रिकार्ड की अंतर्राष्ट्रीय जांच भी टाली जा सकती है। जहां तक घोषणा का सवाल है, इसमें कोई नये अधिकार नहीं जोड़े गये हैं। विभिन्न प्रकार के अधिकारों के बीच संतुलन बनाने का रास्ता सुझाने में इसकी उपयोगिता या नये शक्तिशाली घटकों के माध्यम से वैश्वीकरण के दौर से गुज़र रही दुनिया में अधिकारों की रक्षा करने के लिहाज से इसकी क्षमता बड़ी सीमित है। लेकिन आम राय और संशोधन से यह मानवाधिकारों के बारे में समन्वित दृष्टिकोण अपनाने के लिए अच्छा आधार बन सकता है।

अन्य अंतर्राष्ट्रीय समझौते

आई सी ई एस सी आर आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों का बुनियादी ढांचा प्रस्तुत करने वाला समझौता है। लेकिन अन्य संगठन भी विशिष्ट समूहों के लिए इन्हीं अधिकारों की व्यवस्था करते हैं। आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार उन अन्य प्रमुख समझौतों के साथ जुड़े हुए हैं जो मानवाधिकारों के समूचे ढांचे में शामिल हैं। ये समझौते विभिन्न समुदायों की सदियों से परंपरागत रूप से कमज़ोर व असुरक्षित स्थिति को ध्यान में रखते हुए उनकी विशेष आवश्यकताओं, विशिष्टताओं और कमज़ोरियों को दूर करने के लिए बनाए गए हैं।

ये सब समझौते अपने पूरे विस्तार में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के एक समन्वित ढांचे के रूप में हैं, जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार के लाभार्थियों का ध्यान रख जाता है। फिर भी, यह ढांचा दो अन्य समझौतों के बिना पूरा नहीं होता। इनमें से दो सबसे महत्वपूर्ण समझौते हैंः सी ई डी ए डब्ल्यू और सी आर सी।

सी ई डी ए डब्ल्यू (1979) महिला–अधिकारों का एक घोषणा पत्र उपलब्ध कराता है। यह महिलाओं के खिलाफ़ भेदभाव को व्यापक संदर्भ में रखता है और इस बात की पहचान करता है कि ''इस तरह का भेदभाव महिलाओं को पुरुषों के बराबर देश के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में हिस्सा लेने में बाधाएँ पैदा करता है। इस कारण समाज तथा परिवार का विकास और समृद्धि पूरी तरह से नहीं हो पाती है और महिलाओं को अपने देश तथा मनुष्य जाति की सेवा में अपने अंदरूनी सामर्थ्यों का उपयोग करने में कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं।''[212] इसमें एक महत्वपूर्ण बात यह स्वीकार की गयी है कि ''गरीबी की स्थिति में भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण, रोज़गार के अवसर और अन्य आवश्यकताएं पूरा करने में महिलाओं की सबसे अधिक उपेक्षा होती है।'' इसलिए राज्यों से अपेक्षा की जाती है कि वे ''सभी क्षेत्रों में, खास तौर पर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में महिलाओं का संपूर्ण विकास व उन्नति सुनिश्चित करने के लिए कानूनी उपायों सहित तमाम उपयुक्त कदम उठाएं जिससे उन्हें मानवाधिकार और मौलिक स्वतंत्रताओं के मामले में पुरुषों के बराबर का मौका मिले और वे निश्चित रूप से इनका लाभ उठा सकें।''[213] एक अन्य अनुच्छेद में इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु ठोस कार्रवाई के लिए राज्यों को प्राधिकृत किया गया है।[214] हस्ताक्षर करने वाले राज्य महिलाओं और पुरुषों के सामाजिक तथा सांस्कृतिक व्यवहार के तौर–तरीकों में बदलाव लाने के लिए संकल्पबद्ध हैं ताकि ऐसे पूर्वाग्रह और परम्पराएं समाप्त हों जिनसे स्त्री या पुरुष के लिए समाज में खास तरह की भूमिका का निर्धारण होता हो या जिससे किसी को हीनता का अहसास होता हो।[215] उन्हें ऐसे सभी उपाय करने चाहिए जिनसे महिलाओं की खरीद–फरोख्त और शोषण व वेश्यावृत्ति पर रोक लगे।[216] उन्हें यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि महिलाओं को राजनीतिक और नागरिक अधिकारों के बारे में पुरुषों के समान दर्जा मिले।[217] इसी तरह महिलाओं को

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

cyan black

शिक्षा,[218] रोज़गार,[219] स्वास्थ्य[220] और आर्थिक व सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में पुरुषों के बराबर के अधिकारों की गारंटी दी गयी है, खास तौर पर परिवार संबंधी लाभों, बैंक ऋणों, चीज़ें गिरवी रखने और अन्य प्रकार के वित्तीय ऋणों और मनोरंजन, खेलकूद व सांस्कृतिक जीवन से संबंधित गतिविधियों में बराबरी का हकदार माना गया है।[221]

सी ई डी एडब्ल्यू महिलाओं को कानून के समक्ष पूरी समानता प्रदान करता है और उन्हें अनुबंध (contract) करने और संपत्ति के लेनदेन का अधिकार भी देती है।[222] महिलाओं को विवाह और पारिवारिक जीवन के क्षेत्र में भी अधिकार हैं, जिसमें स्वतंत्र रूप से जीवन साथी के चुनाव का अधिकार और अपनी इच्छा व पूरी रजामंदी से विवाह का अधिकार भी शामिल हैं। इसके अलावा पारिवारिक संपत्ति के प्रबंधान में पूरी समानता और विवाह के लिए निर्धारित न्यूनतम आयु सीमा पूरी होने से पहले विवाह करने से इन्कार का अधिकार भी शामिल है।[223] इस समझौते में राज्यों से अपेक्षा की गयी है कि वे ग्रामीण महिलाओं द्वारा महसूस की जाने वाली खास समस्याओं और अर्थव्यवस्था के गैर–मौद्रिक क्षेत्र (non-monetised sector) में उनके योगदान सहित परिवार के आर्थिक अस्तित्व को कायम रखने में उनके द्वारा निभाई जाने वाली महत्वपूर्ण भूमिका का ध्यान रखें। परिणामस्वरूप, उन्हें कृषि ऋण और आर्थिक सहायता, समस्त सामुदायिक गतिविधियों में भागीदारी, प्रशिक्षण और साक्षरता तथा स्व–सहायता समूहों व सहकारी संस्थाओं के रूप में संगठित होने के भी पक्के इंतजाम किये जाने चाहिए ताकि वे रोज़गार और स्व–रोज़गार के माध्यम से आर्थिक अवसरों का समान रूप से फायदा उठा सकें। मोटे तौर पर, राज्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि महिलाएं भागीदारी और समुचित जीवन स्थितियों, खास तौर पर आवास, स्वच्छता, बिजली, पानी की आपूर्ति, परिवहन और संचार की सुविधाओं सहित तमाम अधिकारों का लाभ उठा सकें।[224]

सी आर सी मानवाधिकारों संबंधी समस्त समझौतों में से ऐसा समझौता है जिसका सबसे अधिक अनुसमर्थन किया गया है। इसमें इस बात को मान्यता दी गयी है कि ''दुनिया के तमाम देशों में बच्चों को अत्यंत कठिन स्थितियों में रहने को मजबूर होना पड़ रहा है'' और उनके ऊपर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता हैं।[225] समझौते के केन्द्रीय विषय अनुच्छेद 3.1 में इस प्रकार बताया गया है :

बच्चों से संबंधित तमाम गतिविधियों में, चाहे वे समाज कल्याण की सार्वजनिक या निजी संस्थाओं द्वारा संचालित की गई हों या फिर न्यायिक अदालतों, प्रशासनिक अधिकारियों और विधायी संस्थाओं द्वारा, मुख्य विषय बच्चों के हित ही होंगे।

यह महसूस करते हुए कि प्रत्येक बच्चे को जीवन का जन्मजात अधिकार प्राप्त है, राज्य यह सुनिश्चित करने के लिए सहमत हैं कि ''बच्चों की उत्तरजीविता और विकास अधिक से अधिक हो।''[226] बच्चे के लिए राष्ट्रीयता की सुनिश्चित व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि उसके सामने राज्यहीनता की स्थिति उत्पन्न न हो और इसके साथ ही उसकी पहचान के विकास और संरक्षण की भी व्यवस्था होनी चाहिए।[227] समझौते के केन्द्रीय विषयों में से एक है – परिवार की एकता और संरक्षण तथा परिवार को सहायता, क्योंकि जैसा कि (समझौते की) प्रस्तावना में कहा गया है कि परिवार ''समाज का मूलभूत समूह है और अपने सभी सदस्यों, खास तौर पर बच्चों के लिए विकास और खुशहाली का स्वाभाविक माहौल उपलब्ध कराता है।'' इस तरह के संरक्षण और सहायता से परिवार को ''समाज में अपनी जिम्मेदारियों को ठीक तरह से निभाने में मदद मिलेगी।'' कई ऐसे प्रावधान किये गये हैं जिनका उद्देश्य परिवार का भरण पोषण करना और बच्चे का उसके माता–पिता से अलगाव रोकना है, बशर्ते ऐसा अलगाव किसी न्यायिक संस्था द्वारा बच्चे के हित में न बताया गया हो, उदाहरण के लिए, जब माता–पिता बच्चे को बिगाड़ रहे हों।[228] सी आर सी बच्चों को उनके सामान्य नागरिक, कानूनी, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों का आश्वासन दिलाता है, साथ ही यह विस्तार से यह भी स्पष्ट करता है कि इन्हें बच्चों के विशेष संदर्भ में किस तरह लागू किया जाना चाहिए। इस तरह शारीरिक और भावनात्मक सुरक्षा के अधिकार को नया रूप दिया गया है और माता–पिता, कानूनी वारिस या बच्चे की देखरेख के लिए ज़िम्मेदार उसके अभिभावक के संरक्षण के दौरान बच्चे को सभी तरह की शारीरिक और मानसिक हिंसा, पीड़ा या दुर्व्यवहार, उपेक्षा या उपेक्षापूर्ण व्यवहार, बुरा सलूक या शोषण (इसमें यौन शोषण भी शामिल है) से सुरक्षा प्रदान की गयी है।[229] स्वास्थ्य के अधिकार में स्पष्ट किया गया है कि राज्यों को शिशु और बाल–मृत्यु दर कम करने के लिए कदम उठाने चाहिए। माताओं को प्रसव से पूर्व और इसके बाद स्वास्थ्य की देखभाल की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए और ऐसे रीति–रिवाज़ों को समाप्त कर देना चाहिए जिनसे बच्चो के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।[230] बच्चों को आर्थिक शोषण तथा ऐसे किसी भी कार्य से संरक्षण का पूरा अधिकार है जो उनके स्वास्थ्य या विकास के लिए जोखिम वाला या नुकसानदेह हो सकता है।[231] बच्चों को मादक पदार्थों के

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

गैर कानूनी इस्तेमाल,[232] यौन शोषण और तस्करी से भी बचाया जाना चाहिए।[233] सी. ई. डी. ए.डब्ल्यू. के विपरीत सी. आर. सी. सांस्कृतिक माहौल और बच्चों के अधिकारों को लेकर ख़स तौर पर उत्सुक है।[234] प्रत्येक बच्चे को उसके शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिए उपयुक्त जीवन स्तर का अधिकार है।[235]

अन्य कमज़ोर समूहों, जैसे मूलनिवासी,[236] जातीय अल्पसंख्यक,[237] मजदूरों[238] और शरणार्थियों[239] की विशेष संवेदनशीलता की ओर भी मानवाधिकार व्यवस्था का ध्यान गया है। उनके आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदि अनेक अधिकारों पर जोर दिया गया है जिन्हें नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के साथ समन्वित करने से यह सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी कि इन समूहों के खिलाफ भेदभाव न होने पाये। मानवाधिकार व्यवस्था की यह भी कोशिश है कि इन समूहों को रचनात्मक कार्रवाई (affirmative action) या विशेष संरक्षण का लाभ मिले। उन्हें रोज़गार, आवास, शिक्षा और जीवन की अन्य सुविधाएँ उपलब्ध हों ताकि वे अपने समाज के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में पूर्ण सदस्य के रूप में भाग लें।

क्षेत्रीय स्तर

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों से संबंधित क्षेत्रीय व्यवस्थाओं के नाम हैं: मानव एवं समुदाय के अधिकारों पर अफ्रीकी समझौता तथा अमेरीकी मानवाधिकार समझौता और यूरोपियन सामाजिक घोषणपत्र। इनपर संबंधित क्षेत्रों के बहुत से देशों ने हस्ताक्षर कर दिये हैं।

मानव एवं समुदाय के अधिकारों पर अफ्रीकी समझौता

इस अधिकारपत्र को राष्ट्रमंडल के सभी अफ्रीकी देशों की मंजूरी मिली हुई है। इसमें आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को उच्च प्राथमिकता दी गयी है। इसकी प्रस्तावना में विकास के अधिकार की ओर ध्यान देने का आग्रह करते हुए तमाम अधिकारों के आपस में एक दूसरे से जुड़े होने की बात पर जोर दिया गया है।

चार्टर में ''समानता पर आधारित और संतोषजनक स्थितियों में'' काम करने के अधिकार,[240] शिक्षा के अधिकार,[241] ''शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की बेहतरीन स्थिति'' पाने का अधिकार,[242] ''संस्कृति'' के अधिकार[243] और ''परिवार'' के अधिकार[244] की गारंटी दी गयी है। सभी लोगों को आत्मनिर्णय के अधिकार की भी गारंटी दी गयी है जिसके अंतर्गत राज्यों की आपसी सहमति से अपनी सम्पत्ति और प्राकृतिक संसाधानों का आजादी से लेनेदेन करने या उपयोग का अधिकार भी दिया गया है। ''हर तरह के विदेशी आर्थिक शोषण, खास तौर पर एकाधिकार पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के शोषण को समाप्त करने'' पर हस्ताक्षर करने वाले राज्य सहमत हैं ''ताकि नागरिक प्राकृतिक संसाधनों से होने वाले फायदों का भरपूर लाभ वे उठा सकें''।

चार्टर मे अफ्रीकी मानव तथा समुदाय अधिकार आयोग (African Commission on Human and Peoples' Rights) के गठन की बात कही गयी है। इस आयोग को प्रोत्साहन और संरक्षण संबंधी कई कार्य सौंपे गये हैं। इनमें शामिल हैं: राष्ट्रीय स्तर की मानवाधिकार संस्थाओं को बढ़ावा देना; सरकारों को सिफारिशें देना; राष्ट्रीय कानून का प्रस्तावित करना; किसी देश, अफ्रीकी एकता संगठन (African Union) या उसके द्वारा मान्यता प्राप्त किसी अन्य संगठन के अनुरोध पर अधिकारपत्र यानी चार्टर की व्याख्या करना; तथा अफ्रीकी एकता संगठन द्वारा सौंपा गया कोई भी अन्य कार्य। सदस्य देशों की आपसी शिकायतों के बारे में भी व्यवस्था की गयी है। इसके अंतर्गत अगर स्थानीय स्तर पर सभी उपाय पूरे हो जाते हैं तो आयोग शिकायतों की जांच कर सकता है और अपनी रिपोर्ट संबंधित देशों और अफ्रीकी एकता संगठन को देता है। अगर कुछ बुनियादी शर्तें पूरी हों तो कुछ व्यक्तियों द्वारा या सामूहिक रूप से भी शिकायत की जा सकती है। लेकिन इस मामले में आयोग को सिर्फ सलाह देने का अधिकार ही है। शिकायतों की जांच के लिए ज़िम्मेदार आयोग की यह मशीनरी अब तक बेअसर सी रही है। लेकिन 1998 में मंजूर एक करार के जरिए इसे मजबूत किया गया है। इसके अंतर्गत अफ्रीकी मानव तथा समुदाय अधिकार न्यायालय (African Court on Human and Peoples' Rights) का गठन किया गया है। इसे सामाजिक और आर्थिक अधिकारों सहित अधिकारपत्र में बताए गए सभी अधिकारों को लागू करने का अधिकार सौंपा गया है।[245] करार को क्रियाशील होने के लिए 15 देशों की सहमति होना जरूरी है। जनवरी 2001 तक केवल 4 देशों ने इस करार का अनुसमर्थन किया था जिनमें राष्ट्रमंडल से एकमात्र देश गाम्बिया शामिल है।

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

अमेरिकी मानवाधिकार समझौता

अमेरिकी समझौते पर दस्तखत करने वाले राष्ट्रमंडल देशों में बारबाडोस, डोमिनिका, ग्रेनाडा, जमैका और ट्रिनिदाद व टोबैगो शामिल हैं। समझौते में शामिल देशों को ''अमेरिकी राज्यों का संगठन'' (Organisation of American States) के घोषणापत्र द्वारा निर्धारित और ब्यूनस आयर्स के करार द्वारा संशोधित आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक मानदंडों में निहित अधिकारों को वास्तविकता में बदलने'' का पक्का इंतजाम करने की ज़िम्मेदारी भी सौंपी गयी है।[246]

अमेरिकी प्रणाली में आयोग और न्यायालय दोनों की व्यवस्था है। आयोग का कार्य मुख्य रूप से अधिकारों को बढ़ावा देना है, लेकिन वह किसी देश या किसी समूह या व्यक्ति की राज्य द्वारा मानवाधिकारों के उल्लंघन की शिकायतें भी स्वीकार कर सकता है (बशर्ते वह राज्य इसके अधिकार क्षेत्र को मान्यता दे चुका हो)। आयोग का काम शिकायतों को दोस्ताना तरीके से सुलझाना है। अगर वह ऐसा नहीं कर पाता तो वह शिकायत की जांच कर सकता है और संबद्ध पक्षों को अपनी गुप्त रिपोर्ट दे सकता है। इंटर अमेरिकन कोर्ट ऐच्छिक अधिकारक्षेत्र (optional jurisdiction) वाला संगठन है जिसके फैसले अनिवार्य और ऐच्छिक, दोनों तरह के होते हैं। हाल में, आयोग ने एक गैर–सरकारी संगठन टोलेडो माया कल्चरल काउन्सिल से बेलीज़ के खिलाफ एक शिकायत स्वीकार की है जिसमें घने बरसाती वनों में बड़े विदेशी निगमों को लकड़ी की कटाई और तेल–खोज के लिए रियायतें दिये जाने पर आपत्ति प्रकट की गयी है और कहा गया है कि इससे स्थानीय माया समुदायों के अस्तित्व के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है। बेलीज़ के सुप्रीम कोर्ट द्वारा इस मामले में कोई सुनवाई न करने की वजह से यह कदम उठाया गया। अगर यह आरोप साबित हो जाता है तो यह माना जाएगा कि बेलीज़ ने मानवाधिकारों के संरक्षण के वादे का उल्लंघन किया है।

यूरोपीय सामाजिक घोषणापत्र

जिन राष्ट्रमंडल देशों ने यूरोपीय मानवाधिकार समझौते (यूरोपियन कन्वेंशन ऑव ह्यूमन राइट्स) और सामाजिक घोषणापत्र पर दस्तखत किए हुए हैं, वे हैं : ब्रिटेन, माल्टा और साइप्रस।

सामाजिक घोषणापत्र को काउन्सिल ऑव यूरोप ने 1961 में स्वीकृति प्रदान की। इसका मकसद था यूरोपीय मानवाधिकार के प्रयासों में मदद देना जिसमें कोई आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार शामिल नहीं थे। (हालांकि यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय – European Court of Human Rights– ने अपनी व्याख्याओं में संधि में कुछ अधिकारों को शामिल होने पाया था।) इसका उद्देश्य ग्रामीण और शहरी दोनों ही तरह की आबादी के जीवन स्तर में सुधार करना और अधिकारों के ढांचे के अंतर्गत सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देना है। ख़ास तौर पर समझौता मज़दूरों के अधिकारों की सुरक्षा करता है। इनमें पूर्ण रोज़गार से जुड़े अनेक अधिकार, जैसे काम करने के लिए सुरक्षित और स्वास्थ्यप्रद माहौल का अधिकार, संघ बनाने का अधिकार और सामूहिक रूप से अपनी मांगें रखने का अधिकार शामिल हैं। इसके अलावा महिला मज़दूरों के लिए विशेष संरक्षण; शारीरिक और नैतिक जोखिमों से बच्चों और किशोरों की रक्षा; व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार; उच्चतम स्वास्थ्य का स्तर पाने का अधिकार और उनके आश्रितों के लिए सामाजिक सुरक्षा; और पर्याप्त संसाधनों से वंचित किसी भी व्यक्ति के लिये सामाजिक और स्वास्थ्य संबंधी सहायता तथा सामाजिक कल्याण सेवाओं को प्रत्येक व्यक्ति की पहुंच के दायरे में लाने जैसे अधिकार शामिल हैं। अशक्त, अपंग लोगों तथा माताओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान हैं और समाज की बुनियादी इकाई के रूप में परिवार को ''अपना पूर्ण विकास सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त सामाजिक, कानूनी और आर्थिक संरक्षण'' का अधिकार दिया गया है।''

घोषणा पत्र राज्यों को ''अंतर्राष्ट्रीय संधि के वैधानिक दायित्व''[247] सौंपता है। लेकिन इस दायित्व के निर्वाह पर निगाह रखने के लिए गैर–न्यायिक तरीके बनाये गये हैं। प्रत्येक देश से प्राप्त होने वाली द्विवार्षिक रिपोर्टों के आधार पर निगरानी का काम किया जाता है। सबसे पहले विशेषज्ञों की एक समिति, जिसमें अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को भी आमंत्रित किया जा सकता है, रिपोर्टों की जांच करती है। समिति की रिपोर्टों और टिप्पणियों की एक उप–समिति द्वारा समीक्षा की जाती है। यह उप–समिति सरकारी सामाजिक समिति (Governmental Social Committee) के सदस्य राज्यों की सरकारों द्वारा गठित की जाती है। राष्ट्रीय रिपोर्ट और विशेषज्ञों की

टिप्पणियों के साथ अपनी रिपोर्ट मंत्रियों की समिति को भेजती है। मंत्रियों की समिति दो तिहाई बहुमत से '' अनुबंध करने वाले प्रत्येक पक्ष (contracting party) के लिए आवश्यक सिफारिशें करती है।''[248] मंत्रियों की समिति का एक लाभ यह भी है कि उसे परामर्श सभा (Consultative Assembly) के विचारों का फायदा भी होता है क्योंकि विशेषज्ञों की टिप्पणियां उनके पास भी रहती हैं।[249]

यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय ने बड़े दिलचस्प और कारगर तरीके से नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के बीच आपसी तालमेल बिठाने का प्रयास भी किया है। उसने घोषणा की है कि ''यूरोपीय मानवाधिकर संधि जिन नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के निर्धारण का कार्य कर रही है, उनमें से कई के सामाजिक और आर्थिक निहितार्थ भी हैं। समझौते की व्याख्या सामाजिक और आर्थिक अधिकारों के दायरे में पहुंच सकती है, केवल इसी तथ्य के आधार पर इस तरह की व्याख्या के खिलाफ कोई अंतिम निर्णय नहीं करना चाहिए। उस क्षेत्र को संधि के दायरे में आने वाले क्षेत्र से अलग करने के लिए कोई स्पष्ट विभाजन रेखा नहीं है।''[250]

विभिन्न अधिकारों के बीच दिखाई देने वाली टकराव की स्थिति के बावजूद आर्थिक अधिकारों की रक्षा कैसे की जा सकती है, इसका एक अच्छा उदाहरण यूरोपीय मानवाधिकार न्यायालय ने प्रस्तुत किया है। एक मामले में उसने पर्यावरण के नुकसान और उससे उत्पन्न स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के एक गंभीर मामले को व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन के संरक्षण के अधिकार का उल्लंघन ठहराया है और संपत्ति के अधिकार की तरह के अन्य अधिकारों के दायरे को सीमित करने के लिए आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार का पक्ष लिया। एक अन्य उदाहरण में एक मकान मालिक द्वारा किराया नियंत्रण कानून को दी गयी चुनौती को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि संबंधित सरकार आवास के अधिकार का संरक्षण कर रही है।[251]

दक्षिण एशिया

दक्षिण एशिया में नागरिकों के मानवाधिकारों की रक्षा करने व उन्हें बढ़ावा देने के लिए क्षेत्रीय प्रणाली नहीं है। सार्क का घोषणापत्र[252] जो सदस्य देशों जैसे बांगलादेश, भूटान, मालद्वीप, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका के बीच आर्थिक व तकनीकी सहयोग का आधार निर्धारित करता है, अपने लक्ष्यों में मानवाधिकारों की पूर्ति का उल्लेख नहीं करता। परन्तु कमज़ोर समूह, विशेषकर महिलाओं व बच्चों के अधिकारों के बढ़ रहे उल्लंघनों से प्रेरित होने के कारण सार्क देशों ने अधिकारों के सरंक्षण की व्यवस्था को अपने सहयोग क्षेत्र में जोड़ा है। जनवरी 2002 में दो प्रपत्रों पर हस्ताक्षर किए गए थे– एक बच्चों के कल्याण में वृद्धि के लिए और दूसरा महिलाओं व बच्चों की तस्करी के खिलाफ संघर्ष करने और उसे रोकने के लिए। बाल कल्याण समझौते में सी.आर.सी. में स्वीकृत बच्चों के सभी अधिकार पहचाने गए हैं तथा उनकी पूर्ति की ज़िम्मेदारी सार्क के देशों पर डाली गयी है।[253] उन्हें बाल–विकास संबंधी एक राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू करने के लिए कहा गया है जिसके प्राथमिक लक्ष्य–क्षेत्र कुपोषण, बीमारी और शिक्षा हैं।[254] यह सुनिश्चित करना राज्यों का कर्त्तव्य है कि बच्चों की शोषण, भेदभाव, हिंसा और अवैध व्यापार से कानूनन रक्षा की जाए। उनका यह भी दायित्व बनता है कि वे शिक्षा के माध्यम से बाल–मज़दूरी को दूर करने तथा इससे होने वाली आमदनी के नुकसान के लिए संबंधित परिवारों को मुआवज़े के तौर पर सामाजिक सुरक्षा प्राप्त कराने के लिए कार्यवाही करें।[255] यह सुनिश्चित करना भी राज्य की ज़िम्मेदारी है कि बच्चों तक सभी जानकारियाँ पहुँचे तथा उन्हें अपनी तकलीफों को बताने के लिए उचित अवसर प्राप्त हो।[256]

इस समझौते के प्रावधानों को पूर्ण रूप से लागू करने के लिए राज्य को नया कानून बनाना पडेगा या वर्तमान कानूनों में संशोधन करना पडेगा।[257] यह समझौता राज्य को इन प्रावधानों के पालन के लिए राजनीतिक प्रतिबद्धता व सहयोग देने का कर्त्तव्य सौंपता है।[258] तथापि इस समझौते में एक कमी है, इसमें संयुक्त राष्ट्र के समझौतों के तहत निरीक्षण करने वाले संधि निकायों की भांति कार्य की प्रगति का निरीक्षण करने वाली प्रणाली नहीं है। इसके अतिरिक्त, उन राज्यों के विरुद्ध व्यक्तिगत शिकायत करने की कोई व्यवस्था नहीं है जो समझौते में दिए गए अपने कर्त्तव्यों को पूरा नहीं करते। समझौते को लागू करने से पहले उसे सभी सातों देशों की अभिपुष्टि अवश्य मिलनी चाहिए।

दूसरा समझौता घोषित करता है कि वेश्यावृत्ति के लिए तस्करी, बुनियादी मानवाधिकारों का उल्लंघन है। इसका लक्ष्य सार्क देशों में परस्पर सहयोग को बढ़ाना है जिससे महिलाओं व बच्चों के अवैध व्यापार का अंत हो, पीड़ित अपने देश में वापस भेजे जा सके और

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

उनका पुनर्वास हो।[259] राज्य का कर्त्तव्य है कि वह अवैध व्यापार, इसमें सहायता करने वाले, दुष्प्रेरित करने वाले और आर्थिक सहायता देने वाले को कानून के तहत कड़ी सजा दे।[260] ये अपराध दोषियों के प्रत्यार्पण के लिए पर्याप्त कारण माने गए हैं। जिन देशों के बीच प्रत्यार्पण संधि पहले से मौजूद नहीं है, उनके लिए यह समझौता प्रर्त्यापण का आधार बनेगा।[261] राज्यों का कर्त्तव्य है कि वे अवैध व्यापार और इस समझौते के प्रावधानों के प्रति कानून लागू करने वाली एजेंसियों और न्यायतंत्र को संवेदनशील बनाए। उन्हें चाहिए कि वे तस्करी करने वाली एजेंसियों, संस्थानों, व्यक्तियों, उनके तरीकों व मार्गों के बारे में एक–दूसरे को जानकारी दें ताकि इस समस्या से और प्रभावी रूप से लड़ा जा सके।[262] अवैध व्यापार रोकने और उससे लड़ने में गैर–सरकारी संगठनों के योगदान की प्रशंसा की गयी है तथा पीड़ितों को संरक्षण देने के उनके प्रयासों में राज्यों को सहायता देने के लिए कहा गया है।[263] यह समझौता सार्क राज्यों के अधिकारों का एक क्षेत्रीय कार्यदल बनाने की व्यवस्था करता है जिससे इसके प्रावधानों के कार्यान्वयन में सुविधा हो और उनकी प्रगति के संबंध में आवधिक समीक्षा की जा सके।[264] इस पर्यवेक्षी प्रणाली के संगठनात्मक पहलूओं को सुलझाना अभी बाकी है। समझौते को लागू करने के लिए उसे सभी देशों की अभिपुष्टि अवश्य मिलनी चाहिए।

वेश्यावृत्ति पर अपना ध्यान सीमित कर लेने के कारण यह समझौता दक्षिण एशिया में फैली अवैध मानव व्यापार की बड़ी समस्या पर ध्यान नहीं देता। बंधुआ मज़दूरी, घरेलू कामकाज और निर्माण–कार्य तथा होटलों, दुकानों व गैरजों में काम कराने के लिए पुरुषों, महिलाओं व बच्चों का अवैध व्यापार एक देश से दूसरे देश में किया जाता है। इनका व्यापार भीख मँगाने, अंग–व्यापार, मादक द्रव्यों की तस्करी और अन्य अमानवीय कार्यों के लिए भी किया जाता है। समझौता इन गैर–कानूनी पहलूओं पर ध्यान नहीं देता।

राष्ट्रीय स्तर

अप्रत्यक्ष कार्यान्वयन

प्रारंभिक राष्ट्रीय संविधानों में नागरिकों के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा के प्रावधान नहीं हुआ करते थे। लेकिन यह परम्परा तब कुछ हद तक टूटी जब राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों (Directive Principles of State Policy) को सन् 1950 में भारतीय संविधान में अपनाया गया। यह नई परंपरा राष्ट्रमंडल देशों के संविधान में पहुंची और अब तो नीति निर्देशक सिद्धान्त कई देशों के संविधानों में पाये जाते हैं। राज्य के नीति निर्देशक तत्वों को शामिल करने की प्रेरणा और उनमें निहित सामाजिक और आर्थिक न्याय की समझ की जड़ें भारतीय राष्ट्रीयता और आधुनिक भारत की उस परिकल्पना में बड़े गहरे समाई हुई हैं जिसका सपना आज़ादी के समय देखा गया था। संविधान की आत्मा कहे जाने वाले राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत उन लक्ष्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो हमारे संविधान निर्माताओं ने निर्धारित किये।

एक ऐसे देश में जो उपनिवेशवादी दासता से उबर रहा हो और जहां सामाजिक स्तरीकरण व लिंग–संबंधी असमानताएं हों, बंधुआ मज़दूरी की पुरानी परम्परा हो तथा बड़े पैमाने पर बेरोजगारी और निरक्षरता का बोलबाला हो; नीति निर्देशक सिद्धांतों से अपेक्षा की जाती है कि राज्य की नीतियों और कार्यों से आमदनी, सामाजिक स्तर और अवसरों संबंधी असमानताएं न सिर्फ व्यक्तियों में, बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे लोगों के समूहों के बीच में भी कम होंगी।

समतापरक समाज के निर्माण के लिए राज्य को यह सुनिश्चित करना होगा कि सभी नागरिकों को समुचित आजिविका का अधिकार हो तथा संसाधनों के स्वामित्व एवं वितरण और भौतिक संसाधनों के नियंत्रण से आम आदमी के हितों का बेहतरीन तरीके से संरक्षण हो। आर्थिक प्रणाली इस तरह से कार्य करे कि संपत्ति या उत्पादन के साधनों के चंद लोगों के हाथों में सिमट जाने से सबके साझा हितों को नुकसान न पहुंचे।

शोषण से रक्षा और उपेक्षित वर्गों के संरक्षण के लिए यह सुनिश्चित करना होगा कि नागरिकों को आर्थिक मजबूरियों की वजह से ऐसे व्यवसाय न अपनाने पड़ें जो उनकी आयु और शक्ति के लिए अनुचित है। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों का शोषण न हो तथा बच्चों को खास तौर पर विकास का पूरा मौका मिले। अन्य नीति निर्देशक सिद्धांत जरुरतमंदों के लिए मुफ्त कानूनी सहायता, जीवन यापन के लिए समुचित मज़दूरी की गारंटी, सदियों से उपेक्षित जातियों, जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों को संरक्षण;

स्वास्थ्य और पौष्टिकता के स्तर में सुधार; 14 साल तक के बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था; स्थानीय सरकारों में लोगों की और उद्यमों के प्रबंधन में मज़दूरों की भागीदारी के अधिकार; पर्यावरण के संरक्षण और उसमें सुधार तथा वनों व वन्य जीवों की रक्षा की बात करते हैं।

इसके अलावा, कुछ अन्य नीति निर्देशक सिद्धांत भी हैं जिनमें घोषणा की गयी है कि ''आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर राज्य काम के अधिकार, शिक्षा के अधिकार और बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी, अक्षमता और अन्यायपूर्ण अभाव के मामलों में सार्वजनिक सहायता सुनिश्चित करने के लिए कारगर प्रावधान करेगा।''

हालांकि नीति निर्देशक सिद्धांतों को अदालत के जरिए लागू नहीं कराया जा सकता, लेकिन ''देश के शासन में इनका बड़ा महत्व है। राज्य का यह दायित्व होगा कि वह इन सिद्धांतों का कानून बनाते समय उपयोग करे।''[265] कई वर्षों से संविधान की व्याख्या करने वाली अदालतों द्वारा नीति निर्देशक सिद्धांतों का उपयोग सरकार के लिए दिशानिर्देश तय करने के लिए किया गया है। उन्हें कानूनी तौर पर लागू होने वाले ऐसे सिद्धांतों के रूप में कभी नहीं देखा गया जिन्हें अधिकारों की तरह अनिवार्य रूप से लागू किया जा सके।

लेकिन धीरे धीरे बदलाव आया है और अब यह महसूस किया जाने लगा है कि ''मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच तालमेल और संतुलन हमारे संविधान के बुनियादी ढ़ाँचे (basic structure) की एक अनिवार्य विशेषता है।''[266] नीति निर्देशक सिद्धांतों में लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं, जबकि मौलिक अधिकार उन साधनों का निर्धारण करते हैं, जिनसे ये लक्ष्य प्राप्त किये जा सकें।[267] अब भारत में स्थिति यह है कि प्रवर्तनीय (enforceable) मौलिक अधिकारों की व्याख्या नीति निर्देशक तत्वों के आलोक में होनी चाहिए और जब भी संभव हो इन सिद्धांतों की व्याख्या मौलिक अधिकारों के साथ की जानी चाहिए।

भारत में मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रताओं का दायरा, जिसका निमार्ण व्यक्ति की पाश्चात्य एवं उदारतावादी परंपरा से प्रभावित होकर किया गया था, अब काफी विस्तृत हो गया है। उदाहरण के लिए, अदालतों ने जीवन के अधिकार की बड़ी व्यापक परिभाषा दी है जिससे इसका अर्थ सिर्फ पशुओं की तरह अपना अस्तित्व बनाए रखना न होकर कहीं अधिक व्यापक हो गया है।[268] मानवीय गरिमा के साथ जीना और जीवन के लिए आवश्यक न्यूनतम जरूरतों, जैसे पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक आहार, वस्त्र और आवास सुविधा, पढ़ने–लिखने और अपने विचारों को विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त करने की सुविधा, मुक्त रूप से घूमने–फिरने तथा अन्य लोगों के साथ मिलने–जुलने की स्वतंत्रता का होना भी इसके अंतर्गत शामिल है।[269] जीवन के अधिकार में कुछ और बातें जोड़ते हुए अदालत ने स्पष्ट रूप से नीति निर्देशक सिद्धान्तों में स्वास्थ्य रक्षा, शिक्षा सुविधा तथा काम करने के लिए न्यायोचित व मानवीय माहौल उपलब्ध कराने को भी शामिल कर लिया है।[270] इसी में हाल ही में चिकित्सा सेवाओं, खास तौर पर आपात स्थितियों में चिकित्सा सेवा की गारंटी को भी शामिल किया गया है। राज्य वित्तीय अड़चनों की वजह से मानव जीवन को सुरक्षित रखने के लिए पर्याप्त चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध कराने के अपने संवैधानिक दायित्व से बच नहीं सकता।[271]

भारत के उदाहरण से प्रोत्साहित होकर बांगलादेश के सर्वोच्च न्यायालय ने जीवन के अधिकार का अपने संवैधानिक संदर्भ में और विस्तार किया है और इसे जीवन तथा जीवन का पूरा आनंद लेने के लिए शरीर की रक्षा तक सीमित नहीं रखा है, बल्कि इसमें अन्य बातों के साथ साथ आम लोगों के स्वास्थ्य और दीर्घजीवन के संरक्षण को भी जोड़ दिया है।[272]

इन ज़ोरदार प्रयासों के बावजूद, न्यायपालिका न तो इतनी सक्षम है कि आर्थिक और सामाजिक लाभों के अधिकार[273] को सुस्थापित कर सके और न उसकी इस कार्य में दिलचस्पी है। खास तौर पर, भारत या बांगलादेश में तो वह सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को मान्यता देने वाले फैसलों को लागू करने में भी असफल रही है। मौलिक अधिकारों की वृद्धि या उन की बदलती या बढ़ती हुई व्याख्या का खयाल न रखते हुए, नीति निर्देशक सिद्धांतों को मौलिक अधिकारों में समाहित करने से उनको कोई ठोस कानूनी आधार नहीं मिल जाता और न ही इन्हें कानूनी तौर पर सीधे लागू करने योग्य बनाया जा सकता है।

भारत में अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून लागू करने में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका

भारत ने आई सी सी पी आर और आई सी ई एस सी आर को 1979 में अभिपुष्टि दे दी थी। तब से इन अंतर्राष्ट्रीय समझौतों में स्वीकृत अधिकार देश के न्यायालयों में प्रवर्तनीय हैं। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को स्थापित करने के लिए 1993 में संसद द्वारा पारित मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम इन प्रसंविदाओं में मौजूद सभी मानवाधिकारों की प्रवर्तनीयता को पहचानता है।[274] इस धारा की संकुचित व्याख्या की जाए तो सी ई डी ए डब्ल्यू, सी आर सी और सी ई आर डी जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार समझौते भारतीय न्यायालयों के अधिकार–क्षेत्र के बाहर रह जाते हैं। परंतु, सर्वोच्च न्यायालय सरकार को उसके द्वारा अभिपुष्टित सभी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार समझौतों और अब तक उसके द्वारा हस्ताक्षरित अन्य घोषणाओं के अनुसार नागरिकों के राजनीतिक, आर्थिक, नागरिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा व पूर्ति करने के उसके कर्त्तव्यों के विषय में समय–समय पर याद दिलाता रहता है। सर्वोच्च न्यायालय ने आजीविका, आवास, न्यायोचित मज़दूरी, सामाजिक सुरक्षा, सुरक्षित वातावरण व सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं जैसे मानवाधिकारों को संविधान के अनुच्छेद 14 एवं 21 की व्याख्या करते समय मौलिक अधिकारों का दर्ज़ा दिया है। ये संवैधानिक प्रावधान प्रत्येक नागरिक को समानता व भेदभाव से मुक्ति तथा जीवन व स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकारों से वर्तमान मौलिक अधिकारों की अर्थव्याप्ति में विस्तार हुआ है। यह भारतीय न्यायतंत्र में हाल ही में आई एक नई प्रवृत्ति है। निम्नलिखित चुनिंदा उद्‌घोषणाएं इस नये विकास की संकेतक है।[275]

आवासन का अधिकार

"आई सी ई एस सी आर के अनुच्छेद 11(1) के अनुसार राज्य नागरिक के और उसके परिवार के यथोचित जीवन स्तर के अधिकार – जिसमें रोटी, कपड़ा और मकान तथा जीवन परिस्थितियों में निरन्तर सुधार शामिल हैं, – का सम्मान करते हैं।" राज्य इन अधिकारों की प्राप्ति को सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त कदम उठायेंगे। गरीबों के पक्के आवास और निवास का अधिकार जिसे आई सी ई एस सी आर के अनुच्छेद 19(1)(म) में स्वीकार किया गया है, तब तक एक भ्रामक सपना बनकर रह जाएगा जब तक राज्य उनके लिए रोटी, कपड़ा और मकान का प्रबंध नहीं करेंगे जो उन्हें अपने जीवन को सार्थक रूप से गरिमा के साथ जीने के लिए ज़रूरी हैं — अतः राज्य के लिए अनिवार्य है कि वह अपने या अपनी संस्थाओं द्वारा चलाई गई आवास योजना के तहत उनके आर्थिक स्तर के अनुसार गरीबों को स्थाई आवास दिलाये जिससे वह आसान किश्तों में कीमत का भुगतान कर सके तथा संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ड.) और 21 में आश्वासित स्थाई आवास के अधिकार को प्राप्त कर सके।"

(*पी.जी.गुप्ता बनाम गुज़रात सरकार व अन्य* मामले में के. रामास्वामी, एस. मोहन और एन. वेंकटाचेला जेजे)

न्यायोचित मज़दूरी और समान कार्य के लिए समान मज़दूरी का अधिकार

"सरकार अपने वर्चस्वशाली होने का लाभ नहीं उठा सकती है व किसी मज़दूर को अनियमित मज़दूर के रूप में काम करने के लिए मजबूर नहीं कर सकती है——। अन्य विकल्प न होने के कारण यह मज़दूर कम मज़दूरी पर काम कर रहा है। सरकार को एक आदर्श नियोजक बनना चाहिए। अलग–अलग दरों पर मज़दूरी देने के लिए अनियत मज़दूरों का वर्गीकरण — तर्कसंगत नहीं है। यह आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकार के अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, 1966 के अनुच्छेद 7 की विचारधारा के विपरीत है जो सभी राज्यों को न्यायोचित मज़दूरी व समान कार्य के लिए समान मज़दूरी की व्यवस्था करने का उपदेश देता हैं।"

(*भारतीय डाक तार मज़दूरी मंच के माध्यम से डाक एवं तार विभाग के तहत नियोजित अनियमित दिहाड़ी मज़दूरी बनाम भारत संघ* मामले में ई.एस.वेंकटारामैया और एस. रंगनाथन जेजे)

सामाजिक सुरक्षा का अधिकार

"आई सी ई एस सी आर का अनुच्छेद 7 प्रत्येक व्यक्ति को न्यायोचित व अनुकूल कार्य–माहौल के अधिकार की प्राप्ति के प्रति समान रूप से आश्वस्त करता है। यह अधिकार न केवल पर्याप्त पारिश्रमिक व उचित मज़दूरी की गारंटी देता है बल्कि प्रसंविदा के अन्य प्रावधानों के अनुसार मज़दूर व उसके परिवार को गरिमापूर्ण जीवन का आश्वासन देता है। सामाजिक सुरक्षा लोगों के सामाजिक–आर्थिक न्याय का एक

cyan black

पहलू है तथा जीविका का एक माध्यम है। अपीलकर्त्ता या बीमा क्षेत्र के अन्य किसी भी अधिकारी का सार्वजनिक कर्त्तव्य बनता है कि वह अपनी नीतियाँ ऐसी न्यायोचित, उचित व तर्कपूर्ण नियम व शर्तों के अनुरूप तैयार करे जिससे वह समाज के सभी स्तरों के पात्र व्यक्तियों को बीमा सुरक्षा प्रदान कर सके। पात्रता की शर्तें संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार व नीतिनिर्देशक सिद्धान्तों के अनुसार हों।"

(*एल.आई.सी. भारत बनाम उपभोक्ता अनुसंधान एवं शिक्षा केन्द्र* मामले में के. रामास्वामी और एन. वेंकटाचला)

विकास का अधिकार

"विकास के अधिकार (1986) की सफल संयोजन सभा में एक सक्रिय भागीदार होने के नाते तथा घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने वाली एक पार्टी होने से भारत का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक, नागरिक व सांस्कृतिक अधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के अनुरूप ही अपनी वैधानिक या व्यवस्थापक नीतियों को सूत्रबद्ध करे, विशेष रूप से, गरीब, दलित व आदिवासियों के लिए जैसा भारत के संविधान के अनुच्छेद 38, 39 के साथ अनुच्छेद 46 में निर्देशित किया गया है। यह अनुच्छेद 21 में मान्यता प्राप्त जीवन के अधिकार से जुडा हुआ है। इन नियमित प्रयत्नों से जीवित रहने का मौलिक अधिकार तर्कपूर्ण हो जाएगा। इस के ज़रिए अपनी योग्यता को पूर्ण रूप से साकार करने का अभिन्न मानवाधिकार प्राप्त होगा; जीवन–स्तर में वृद्धि हो पायेगी; योग्यता बढ़ेगी और गरिमा तथा सामाजिक एवं आर्थिक न्याय के साथ समानता के स्तर पर जीवन व्यतीत करने का अवसर मिलेगा।''

(*समता बनाम आंध्र प्रदेश राज्य* मामले में के. रामास्वामी, एस. साग़ीर अहमद जे.बी. पट्टनायक जेजे)

बाल अधिकार

''अनुच्छेद 36 (सी आर सी) दर्शाता है कि राज्य बच्चों के कल्याण के किसी भी पहलू के प्रतिकूल होने वाले सभी प्रकार के शोषणों से उन्हें बचायेगा। निस्संदेह सरकार ने इस समझौते के प्रावधानों को क्रमशः कार्यान्वित करने की शर्त पर पुष्टीकृत किया था, परंतु उस के कारण सरकार संविधान के नीति–निर्देशक सिद्धान्तों के प्रति अपने प्रशासनिक दायित्वों से छुटकारा नहीं पा सकती *जे.पी. उन्नीकृष्णन बनाम आंध्रप्रदेश राज्य* [(1993) 1 एससीसी 645] मामले में, संविधान खंडपीठ ने 14 वर्ष की आयु तक शिक्षा को मौलिक अधिकार माना– पेय जल के अधिकार को एक मौलिक अधिकार माना जाता है, जीवन के तर्कसंगत अधिकार को एक मौलिक अधिकार माना जाता है। बच्चे इन मौलिक अधिकारों के लिए समान रूप से हकदार हैं। अतः राज्य का कर्त्तव्य है कि वह संविधान के अनुच्छेद 39(ङ) और (च) के अंतर्गत सुविधाएँ व अवसर उपलब्ध कराये तथा गरीबी व आवारागर्दी के कारण उनके बचपन को शोषण से बचाये।"

(*बंधुआ मुक्ति मोर्चा इत्यादि बनाम भारत संघ व अन्य* मामले में के. रामास्वामी व एस. साग़ीर अहमद जेजे)

महिलाओं के अधिकार

संसद ने *मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम,* 1993 में बनाया। अनुच्छेद 2(ख) मानवाधिकार को इस प्रकार परिभाषित करता है "प्रत्येक व्यक्ति के जीवन, स्वतन्त्रता और गरिमा से संबंधित वे अधिकार जो संविधान द्वारा स्वीकृत हैं, अंतर्राष्ट्रीय घोषणापत्रों में शामिल हैं और भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय हैं।" इसके द्वारा सी ई डी ए डब्ल्यू में दिए गए सिद्धान्त और विकास के सहवर्ती अधिकार भारतीय संविधान और मानवाधिकार अधिनियम के अभिन्न अंग बन गए है और प्रवर्तनीय हैं। नीति–निर्देशक सिद्धान्त और मौलिक अधिकार मानव के व्यक्तित्व के विकास और भेदभाव खत्म करने के लिए प्रथम आधार हैं, परन्तु यह घोषणापत्र इसमें शीघ्र कार्यान्वयन की अत्यावश्यकता को जोड़ देता है। इसलिए राज्य के लिए यह आवश्यक है कि वह सी ई डी ए डब्ल्यू के अनुच्छेद 2(च) और सम्बद्ध अनुच्छेदों का अनुपालन करके भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 के अधिदेशाधीन लिंग आधारित सभी भेदभावों को रोके। राज्य को सभी उपयुक्त उपाय करने चाहिए। इनमें ऐसे वर्तमान कानूनों, अधिनियमों, प्रथाओं व रिवाजों में संशोधन करना भी शामिल है जिनमें महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव होता है।"

(*सी. मसिलमणि मुदलीयार व अन्य बनाम आइडोल ऑव स्वामीनाथास्वामी, स्वामीनाथास्वामी थिरुकोइल व अन्य* मामले में जे.बी पट्टनायक, के. रामास्वामी और एस. सागिर अहमद जेजे)

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

फिर भी अदालतों ने उनका अच्छा उपयोग किया है। नीति निर्देशक सिद्धांतों की रक्षा करते समय अदालतें यह सुनिश्चित करने की कोशिश करती हैं कि सरकार द्वारा उन्हें अस्वीकार करने से पहले विधिसम्मत प्रक्रिया का पालन हुआ हो। अदालतों ने नीति निर्देशक सिद्धांतों का उपयोग सरकारों, विधायिकाओं और प्रशासकों को सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के निर्देश देने के लिए आधार के रूप में किया है। उन्होंने नीति निर्देशक सिद्धांतों का उपयोग मौलिक अधिकारों के दायरे को सीमित करने के लिए ऐसी स्थितियों में किया है, जब मौलिक अधिकारों पर अमल से नीति निर्देशक सिद्धांतों से मिले संरक्षण के लिए खतरा उत्पन्न होता है। उदाहरण के लिए, जीवन निर्वाह मज़दूरी और काम करने के लिए अच्छी स्थितियों के बारे में जो नीति निर्देशक सिद्धांत हैं, उनका उपयोग न्यूनतम मज़दूरी कानून (*Minimum Wages Act*) द्वारा लगाई गई पाबंदियों के औचित्य को सिद्ध करने के लिए किया गया।

भारतीय न्यायालयों ने निर्णय किया है कि यद्यपि नीति निर्देशक सिद्धांतों को अदालतों के जरिए लागू नहीं किया जा सकता और न्यायालय विधायिका या कार्यपालिका को उन्हें लागू करने को नहीं कह सकते, लेकिन एक बार उनके अनुसार कानून बन जाने पर अदालतें राज्य को कह सकती हैं कि वे कानून को लागू करें, खास तौर पर उन स्थितियों में जब इन्हें लागू न करने से मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता है। कभी कभी न्यायालयों ने और आगे बढ़ कर किसी अधिकार को नीति निर्देशक सिद्धांत का आधार दिया है। उदाहरण के लिए, शिक्षा के बारे में व्याख्या दी गयी है कि ''देश के प्रत्येक बच्चे/नागरिक को 14 वर्ष की उम्र का होने तक मुफ्त शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।''[276] आनुकल्पिक रूप में उन्होंने नीति निर्देशक सिद्धांतों का उपयोग करके राज्य को निजी संस्थाओं की गतिविधियों के विनियमन की ज़िम्मेदारी सौंप दी है। इसके उदाहरण हैं, मज़दूरों की राय के बिना किसी कम्पनी को बंद करने से रोकना या राज्यों के ऊपर निजी कॉलेजों के शुल्क ढांचे का निर्धारण करने के लिए कानून पारित करने का दायित्व डालना ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि ऊंची शुल्क दर के कारण गरीब विद्यार्थी इन कॉलेजों से पूरी तरह से बाहर न रह जाएं।

कुल मिलाकर, अदालतों ने नीति निर्देशक सिद्धांतों का उपयोग कई अच्छे कानूनी उपायों के तौर पर किया है। उदाहरण के लिए, ज़रूरतमंद समुदायों की सहायता के लिए कल्याण निधि बनाना या राज्य को ऐसे माता–पिता को रोज़गार देने को कहना जिनके बच्चे ऐसा न करने पर जोखिम वाली स्थितियों में कार्य करने को मजबूर हो जाएंगे। इस तरह अदालतों ने दावा किये जाने योग्य (justiciable) और दावा न किये जाने योग्य (non-justiciable) अधिकारों के बीच के अंतर को काफी कम कर दिया है और आर्थिक तथा सामाजिक अधिकारों को और सुदृढ़ बना दिया है।

राष्ट्रमंडल के अनेक देशों, जैसे घाना, नामीबिया, युगांडा, नाइजीरिया, पापुआ न्यूगिनी और श्रीलंका ने नीति निर्देशक सिद्धांत प्रणाली को अपनाया है। युगांडा के 1995 के संविधान में नीति निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत स्त्री–पुरुष समानता, उपेक्षित वर्गों के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व, बुजुर्गों का कल्याण और देखरेख, विकास का अधिकार तथा शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, साफ व सुरक्षित पेय जल, अच्छा आवास, पर्याप्त वस्त्र, खाद्य सुरक्षा और पेंशन व रिटायरमेंट संबंधी फायदे उपलब्ध कराने जैसी बातें शामिल की गयी हैं। घाना के संविधान में राज्य से अपेक्षा की गयी है कि वह भ्रष्ट तौर–तरीकों और सत्ता के दुरुपयोग को रोकेगा, पर्यावरण का संरक्षण करेगा, लोगों को भागीदारी का अधिकार देगा, नागरिकों के स्वास्थ्य की रक्षा की व्यवस्था करेगा, रोज़गार में लगे सभी लोगों की सुरक्षा और कल्याण की व्यवस्था करेगा, देश के सभी भागों में और सभी स्तरों पर मुक्त, अनिवार्य और सर्वसुलभ प्राथमिक शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध कराएगा और स्वदेशी संस्कृतियों को बढ़ावा देगा। हालांकि अधिकतर मामलों में नीति निर्देशक सिद्धांतों को लागू करवाने के लिए अदालत में दावा नहीं किया जा सकता, लेकिन कुछ मामलों में वे जिस तरह से बाध्यकारी हैं उससे वे अनिवार्य कानूनी ज़िम्मेदारी बन जाते हैं। उदाहरण के लिए, घाना के संविधान में कहा गया है कि नीति निर्देशक सिद्धान्त ''सभी नागरिकों, संसद, राष्ट्रपति, न्यायपालिका, राज्य परिषद, मंत्रिमंडल, राजनीतिक दलों और अन्य संस्थाओं व व्यक्तियों को संविधान या किसी अन्य कानून को लागू करने अथवा उसकी व्याख्या करने या कोई भी नीतिगत निर्णय लेने अथवा उसे लागू करने तथा न्यायोचित व स्वतंत्र समाज के निर्माण में दिशा निर्देश देने का कार्य करेंगे।''[277] राष्ट्रपति को साल में कम से कम एक बार संसद को उन कदमों के बारे में बताना होता है जो दिशानिर्देशों, खास तौर पर मूल मानवीय अधिकारों, सुदृढ़ अर्थव्यवस्था, रोज़गार के अधिकार, अच्छी स्वास्थ्य सुविधाओं के अधिकार और शिक्षा के अधिकार पर अमल के लिए उठाए गए हैं।''[278]

भेदभाव के शिकार न बनने का अधिकार सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को लागू करने के लिए विशेष रूप से उपयोगी अधिकार के रूप में उभर कर सामने आ रहा है। कनाडा के सर्वोच्च न्यायालय ने ऐलान किया है कि सरकार की ओर से स्वास्थ्य की देखभाल के कार्यक्रम चलाने वाले अस्पताल अगर मूक–रोगियों को संकेत भाषा में बातचीत समझाने वालों की सेवाएं नहीं दे पाते हैं तो यह अधिकारों के घोषणापत्र की धारा 15 में बताऐ गए वस्तुतः समानता के अधिकार का उल्लंघन है।[279] अदालत ने कहा हैः यह सिद्धांत कि ''आम जनता के लिए प्रबंधित सेवाओं को उपेक्षित समूहों को समान रूप से उपलब्ध कराने की दिशा में ठोस कदम न उठाए जाना अपने आप में भेदभादपूर्ण बर्ताव है'', मानवाधिकार क्षेत्र में व्यापाक रूप से स्वीकार किया गया है।[280] अदालत ने अपना पिछला दृष्टिकोण भी दोहराया कि ''सरकार से यह सुनिश्चित करने की अपेक्षा की जा सकती है कि वह धारा 15 के दायरे में आने वाले लोगों या समूहों को समानता का अधिकार दिलाने के लिए कदम उठाए''।[281]

इस तरह आई सी ई एस सी आर की तकनीकी और प्रक्रिया संबंधी कमियों और राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के मार्ग में आने वाली कमियों व प्रक्रियात्मक अड़चनों को दूर करने की व्यापक संभावनाएं हैं। उदाहरण के लिए, समानता की अवधारणा सकारात्मक कार्रवाई (affirmative action) का आधार है। उपेक्षित और वंचित लोगों की भलाई पर ध्यान केन्द्रित करने को अब कई अंतर्राष्ट्रीय समझौते (जैसे आई सी ई एस सी आर, सी ई डी ए डब्ल्यू और विकास का अधिकार) काफी महत्व देने लगे हैं। राष्ट्रमंडल के कई देशों के संविधानों में राज्य से इस बात की अपेक्षा की गयी है या अनुरोध किया गया है कि वे सकारात्मक कार्य नीतियां बनाएं। हालांकि आम तौर पर इन पर अमल अनिवार्य नहीं होता, फिर भी ये भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा का आधार तो प्रदान करती ही हैं।

भारत और दक्षिण अफ्रीका दो उत्कृष्ट उदाहरण हैं जहां कुछ खास जातीय या सामाजिक समूहों के साथ अतीत में हुए अन्याय को नैतिक और राजनीतिक दृष्टि से पहचान कर इस स्थिति के सुधार के लिए राज्य का दायित्व निर्धारित किया गया है। फीजी के हाल के संविधान[282] में सरकार को यह नैतिक दायित्व सौंपा गया है कि वह अधिक गरीब समुदायों और समूहों के लिए प्राथमिकता वाली नीतियों के तहत योजनाएं और कार्यक्रम बनाए। राष्ट्रमंडल के कई अन्य देशों, जैसे मलेशिया, कनाडा और आस्ट्रेलिया ने भी प्राथमिकताओं वाली नीतियां बनायी हैं।

प्रत्यक्ष कार्यान्वयन

नीतिनिर्देशक सिद्धांतों को लागू करने में भारत में आई समस्याओं को देखकर तथा इस अहसास के कारण कि सभी प्रकार के अधिकार आपस में एक दूसरे पर निर्भर हैं और उनको अलग नहीं किया जा सकता तथा सभी अधिकारों के कुछ पहलुओं को कानूनी तौर पर लागू किया जा सकता है, कुछ देशों ने आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को कानूनी तौर पर प्रत्यक्ष रूप से लागू करने योग्य बना दिया है। युगांडा ने सन् 1995 के अपने संविधान में सब नागरिकों के शिक्षा, संस्कृति, काम करने के लिए सुरक्षित और स्वास्थ्य के अनुकूल माहौल, बच्चों के सामाजिक–आर्थिक अधिकारों तथा अल्पसंख्यकों व विकलांगों के अधिकारों को कानूनी तौर पर लागू करने योग्य बनाया। फीजी के 1997 के संविधान में मानवाधिकारों संबंधी प्रावधानों की व्याख्या करते समय अदालतों को मानवाधिकारों के बारे में वर्तमान विवेक और आचरण को ध्यान में रखने के लिए प्रेरित किया गया है। कुल मिलाकर जहां तक कानूनी तौर पर लागू करने और आर्थिक, समाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को नागरिक और राजनीतिक अधिकारों से जोड़ने का सवाल है, सबसे दूरगामी प्रावधान दक्षिण अफ्रीका के संविधान में पाये जाते हैं।

दक्षिण अफ्रीका के संविधान में सम्मिलित आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को तीन मुख्य प्रकारों में बांटा जा सकता है।[283] पहली श्रेणी में बच्चों के सामाजिक, आर्थिक अधिकार; प्रत्येक व्यक्ति का बुनियादी शिक्षा का अधिकार (जिसमें प्रौढ़ों के लिए बुनियादी शिक्षा भी शामिल है); और बंदी एवं कैदियों के सामाजिक–आर्थिक अधिकार शामिल हैं। इन अधिकारों के बारे में राज्य को पूरा दायित्व सौंपा गया है। इनको निरंतर मूर्तिमान करते चले जाने के रास्ते (progressive realisation) में संसाधनों की कमी को बहाना नहीं बनाया जा सकता।

दूसरी श्रेणी के अधिकारों में प्रत्येक व्यक्ति के लिए समुचित आवास, स्वास्थ्य सुविधा, आहार, जल और सामाजिक सुरक्षा के अधिकार को मान्यता प्रदान की गयी है। यहां राज्य के दायित्व के साथ 'उपलब्ध संसाधन' और 'निरंतर मूर्तिमान करते जाना' जैसे शब्द जुड़े हुए हैं।

तीसरी श्रेणी के अधिकरों के अंतर्गत निजी और सार्वजनिक अधिकारियों को कुछ खास तरह के आचरणों से रोका गया है। उदाहरण के लिए, समस्त 'प्रासंगिक परिस्थितियों' को ध्यान में रख कर अदालत द्वारा दिये गये आदेश के बिना लोगों को उनके घरों से बेदखल नहीं किया जा सकता और न किसी ज़रूरतमंद को आपात्कालीन चिकित्सा उपलब्ध कराने से वंचित किया जा सकता है। श्रम, पर्यावरण, भूमि और सांस्कृतिक अधिकारों का भी संरक्षण किया गया है। राज्य को यह दायित्व सौंपा गया है कि वह इन अधिकारों व अन्य अधिकारों का सम्मान करेगा, उनका संरक्षण करेगा तथा उन्हें बढ़ावा देकर पूरा करेगा। दक्षिण अफ्रीका के न्यायालय, खास तौर पर संवैधानिक न्यायालय ने इन अधिकारों की विधिशास्त्रीय व्याख्या और इन्हें लागू करने के तौर–तरीकों के विकास में रचनात्मक भूमिका निभाई है।

अंत में घरेलू कानूनों से लेकर अंतर्राष्ट्रीय समझौतों जैसे सी ई डी ए डब्ल्यू, सी आर सी व अन्य विशिष्ट साधनों के जरिए अधिकारों को लागू करने में राष्ट्रमंडल के कई देशों ने इन सिद्धांतों को अपनाया है। कई सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को अपने अंदर समाहित करने वाले इन अधिकारों को अन्य अर्ध–न्यायिक या प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से स्थानीय अदालतों में कानूनी तौर पर लागू करने योग्य बनाया गया है।

गरीबी के विरुद्ध संघर्षः सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (Millenium Development Goals- एमडीजी)

सहस्राब्दि के प्रारम्भ में संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य देशों ने अन्य बातों के साथ–साथ लोकतंत्र व मानवाधिकारों को मज़बूत बनाने और गरीबी के उन्मूलन के लिए और अधिक परिश्रम करने हेतु स्वयं को कटिबद्ध किया। सितम्बर 2000 के शिखर सम्मेलन में स्वीकृत सहस्राब्दि घोषणा पत्र (Millennium Declaration) में विश्व के सौ करोड़ लोगों से भी कहीं अधिक लोगों को प्रभावित करने वाली गरीबी को मिटाने के लिए सदस्य देशों द्वारा अपनाई वचनबद्धताओं की रूपरेखा दी गई है। मानव की खुशहाली व गरीबी को कम करने सम्बंधी इन 8 ध्येयों में 18 लक्ष्य शामिल है। एमडीजी स्वयं विभिन्न संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों जैसे कोपेनहेगन सामाजिक विकास सम्मेलन, संपोषणीय विकास हेतु रॅयो शिखर सम्मेलन (Rio Summit) और जोहानेस्बर्ग में हुए सहवर्ती सम्मेलनों द्वारा आयोजित अनेक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों से पैदा हुआ है। इन सम्मेलनों में सरकारों, नागरिक समाज के संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वित्त संस्थानों तथा निजी क्षेत्र के संस्थानों ने सक्रिय रूप से भाग लिया। गरीब देशों को उनके विकास की गति के लिए अकेले ही ज़िम्मेदार मानने के लिए एमडीजी की आलोचना भी हुई, परन्तु इसमें से एक उद्देश्य वैश्विक साझेदारी की परिकल्पना करता है। इसके अनुसार अमीर देश व दाता संस्थाएँ विकासशील देशों को और अधिक सहायता देंगे और एक सहयोगात्मक अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वित्तीय वातावरण भी तैयार करेंगे। 48 प्रगति संकेतकों के माध्यम से लक्ष्यों की वैश्विक व समयबद्ध प्रकृति और प्रगति को निर्धारित करने की सम्भावना के कारण एमडीजी की रणनीति गरीबी के विरूद्ध लड़ाई में विश्वसनीय व स्वीकरणीय लगती है।[284]

ध्येय 1 गरीबी व भूख का उन्मूलन

लक्ष्य 1 *प्रतिदिन एक अमेरीकी डॉलर से भी कम आय में जीवन–यापन करने वाले लोगों का अनुपात वर्ष 2015 तक आधा करना।*

प्रगति संकेतक

1 प्रतिदिन एक अमेरीकी डॉलर से भी कम आय पर गुज़ारा कर रहे लोगों के अनुपात में कमी।

2 गरीब लोगों की वास्तविक संख्या में कमी तथा सर्वाधिक गरीब लोगों की संख्या में कमी (अर्थात् गरीबी के विस्तार व गहराई को दर्शाने वाले गरीबी–भेद अनुपात में कमी)।

3 राष्ट्रीय खपत स्तर पर बहुत गरीब लोगों, जो जनसंख्या का 20 प्रतिशत हैं, की हिस्सेदारी में वृद्धि।

लक्ष्य 2 *भूख से पीडित लोगों के अनुपात को आधा करना।*

प्रगति संकेतक

4 5 वर्ष की आयु से कम न्यूनभार वाले बच्चों की संख्या में कमी।

5 आहार का न्यूनतम स्तर प्राप्त नहीं करने वाले लोगों के अनुपात में कमी।

ध्येय 2 विश्व में सबको प्राथमिक शिक्षा दिलाना

लक्ष्य 3 *यह सुनिश्चित करना कि सभी जगह लड़के व लड़कियाँ प्राथमिक शिक्षा का कोर्स पूरा करें।*

प्रगति संकेतक

6 प्राथमिक शिक्षा में लड़के व लड़कियों की भर्ती के शुद्ध अनुपात में वृद्धि।

7 पहली से पाँचवें स्तर तक पहुँचने वाले विद्यार्थियों (लड़के व लड़कियों दोनों) की संख्या में वृद्धि (अर्थात् बीच में ही प्राथमिक स्कूल छोडने वालों में कमी)

8 युवा साक्षरता दर में वृद्धि (15–24 आयु वर्ग)

ध्येय 3 लिंग समानता हेतु प्रोत्साहन व महिलाओं का सशक्तीकरण

लक्ष्य 4 *वर्ष 2005 तक प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा में लिंग भेद को दूर करना तथा वर्ष 2015 तक इसे सभी शैक्षणिक स्तरों से खत्म करना।*

cyan black

<u>प्रगति संकेतक</u>

9 प्राथमिक, माध्यामिक व उच्च शिक्षा स्तर पर लड़कों के मुकाबले लडकियों के अनुपात में सुधार।

10 युवाओं के अनुपात में साक्षर युवतियों की संख्या में सुधार।

11 गैर–कृषि क्षेत्र में मज़दूरी करने वाली महिलाओं की तादाद में वृद्धि।

12 राष्ट्रीय स्तर पर चुनी गयी महिला सांसदों की संख्या में वृद्धि।

ध्येय 4 बाल मृत्यु–दर में कमी

<u>लक्ष्य 5</u> *वर्ष 2015 तक 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु–दर में दो–तिहाई कमी करना।*

<u>प्रगति संकेतक</u>

13 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्युदर में कमी।

14 नवजात शिशुओं की मृत्युदर में कमी।

15 खसरे के टीके लगवाने वाले एक वर्ष के बच्चों के अनुपात में वृद्धि।

ध्येय 5 मातृ–स्वास्थ्य में सुधार

<u>लक्ष्य 6</u> *वर्ष 2015 तक माताओं की मृत्युदर के अनुपात में तीन चौथाई कमी करना।*

<u>प्रगति संकेतक</u>

16 माताओं के मृत्युदर अनुपात में कमी।

17 निपुण पेशेवर स्वास्थ्यकर्मियों की देखभाल में हुए बच्चों के जन्म के अनुपात में वृद्धि।

ध्येय 6 एच आई वी/एड्स, मलेरिया व अन्य बीमारियों से जंग

<u>लक्ष्य 7</u> *एच आई वी/एड्स के फैलाव को रोकना तथा वर्ष 2015 तक उसके प्रसार को कम करने की प्रक्रिया का प्रारंभ।*

<u>प्रगति संकेतक</u>

18 15–24 वर्ष की गर्भवती महिलाओं में एचआईवी की मौजूदगी में कमी।

19 गर्भ–निरोध की दर में वृद्धि।

20 एच आई वी/एड्स के कारण अनाथ होने वाले बच्चों की संख्या में कमी।

<u>लक्ष्य 8</u> *मलेरिया व अन्य प्रमुख बीमारियों के फैलाव को रोकना तथा वर्ष 2015 तक उनके प्रसार को कम करने की प्रक्रिया का प्रारंभ।*

<u>प्रगति संकेतक</u>

21 मलेरिया के प्रसार व इससे सम्बंधित मृत्यु–दर में कमी।

22 मलेरिया के खतरे वाले क्षेत्रों में बसे उन लोगों के अनुपात में वृद्धि, जो इसके प्रभावी रोकथाम व उपचार के उपाय अपनाते हैं।

23 क्षयरोग के प्रसार व इससे संबंधित मृत्यु–दर में कमी।

24 न्यूनकालीन प्रत्यक्ष अवलोकित उपचार (Directly ObservedTreatment Short Course - डॉट्स) के तहत जांचे गए व उपचारित मामलों की संख्या में वृद्धि।

ध्येय 7 पर्यावरणीय संपोषणीयता सुनिश्चित करना

<u>लक्ष्य 9</u> *देश की नीतियों व कार्यक्रमों में संपोषणीय विकास के सिद्धान्त को सम्मिलित करना तथा प्राकृतिक संसाधनों की हानि को सुधारना।*

e:\chri-talisman report\final files\p1 to 8.pmd

<u>प्रगति संकेतक</u>

25 वनाच्छादित भू–भाग में वृद्धि।

26 जैविक–विविधता बनाये रखने के लिए सुरक्षित भू–भाग में वृद्धि।

27 देश की सकल घरेलू उत्पाद के प्रति एक अमेरीकी डॉलर के लिए ऊर्जा उपभोग में कमी।

28 कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में प्रति व्यक्ति स्तर पर कमी।

29 घनीभूत ईंधन (जैसे लकड़ी व काठकोयला) का उपयोग करने वाली जनसंख्या में कमी।

<u>लक्ष्य 10</u> वर्ष 2015 तक उन लोगों के अनुपात को आधा करना जिन्हें सुरक्षित पेय जल सुलभ नहीं है।

<u>प्रगति संकेतक</u>

30 सुरक्षित पेय जल प्राप्त करने वाले लोगों के अनुपात में वृद्धि।

<u>लक्ष्य 11</u> वर्ष 2020 तक गंदी बस्तियों में रहने वाले कम से कम 10 करोड़ लोगों के जीवन में पर्याप्त सुधार करना

<u>प्रगति संकेतक</u>

31 बेहतर सफाई व्यवस्था की सुविधा प्राप्त लोगों के अनुपात में वृद्धि।

32 निश्चित अवधि तक (मालिकाना हक से या किराये पर) मकान पाने वालों के अनुपात में वृद्धि।

<u>ध्येय 8</u> विकास हेतु वैश्विक साझेदारी को बढावा देना

<u>लक्ष्य 12</u> *एक मुक्त, नियम–आधारित, पूर्वानुमेय तथा भेदभावरहित व्यापार एवं वित्तीय प्रणाली का विकास। इसमें राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय, दोनों स्तरों पर सुशासन, विकास और गरीबी को कम करने की प्रतिबद्धता शामिल हैं।*

<u>लक्ष्य 13</u> *न्यूनतम विकसित देशों (एलडीसी) की खास आवश्यकताओं पर दृष्टि केंद्रित करना। इसमें शामिल हैं : एलडीसी के निर्यातों का सीमा–शुल्क रहित व कोटा–मुक्त व्यापार– एचआईपीसी की ऋण सहायता के कार्यक्रम को बढ़ाना व आधिकारिक द्विपक्षीय ऋण (official bilateral debt) को रद्द करना– तथा गरीबी को कम करने के लिए कटिबद्ध देशों के लिए अधिक उदारता से आधिकारिक विकास सहायता देना।*

<u>लक्ष्य 14</u> *स्थल–रुद्ध देशों व विकासशील छोटे द्वीप–राज्यों की खास आवश्यकताओं को संबोधित करना (विकासशील द्वीप–राज्यों की संपोषणीय प्रगति के लिए कार्य योजना, महासभा के विशेष इक्कीसवें अधिवेशन के निष्कर्षों के माध्यम से)*

<u>लक्ष्य 15</u> *राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय उपायों के माध्यम से विकासशील देशों की ऋण समस्याओं से भली–भांति निपटना ताकि अंततः ऋण को दीर्घकाल तक धारणीय बनाया जा सके।*

<u>प्रगति संकेतक</u> आधिकारिक विकास सहायता (ओडीए)

33 आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (Organisation for Economic Cooperation and Development- ओईसीडी) की विकास सहायता समिति (Development Assistance Committee- डीएसी) के सदस्य देशों की सकल राष्ट्रीय आय (जीएनआई) के प्रतिशत के रूप में शुद्ध ओडीए में वृद्धि।

34 बुनियादी सामाजिक सेवाओं, जैसे पौष्टिकता, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, स्वच्छ जल व सफाई को दिए जा रहे कुल द्विपक्षीय और क्षेत्रवार ओडीए के अनुपात में वृद्धि।

35	बिना शर्त वाले द्विपक्षीय ओडीए के अनुपात में वृद्धि।
36	स्थल–रूद्ध देशों को अपने जीएनआई के अनुपात के रूप में प्राप्त ओडीए में वृद्धि।
37	विकासशील छोटे द्वीप–राज्यों को अपने जीएनआई के अनुपात के रूप में प्राप्त ओडीए में वृद्धि।
<u>प्रगति संकेतक</u>	बाज़ार का विस्तार
38	विकासशील देशों से विकसित देशों को निर्यात होने वाले सामान (हथियारों के अतिरिक्त) के अनुपात में वृद्धि तथा न्यूनतम विकसित देशों से आये ज़्यादा से ज़्यादा सामान को शुल्क–मुक्त करना।
39	विकसित देशों को भेजे जाने वाले विकासशील देशों के कृषिजन्य सामान और कपड़ों पर लागू औसत सीमा–शुल्क में कमी।
40	ओईसीडी देशों के अपने सकल घरेलु उत्पाद के रूप में दिए जाने वाली कृषि–सम्बंधी सहायता के आकलन में कमी।
41	विकासशील व न्यूनतम विकसित देशों की व्यापार क्षमता को बढ़ाने के लिए ओडीए के अनुपात में वृद्धि।
<u>प्रगति संकेतक</u>	ऋण की धारणीयता
42	अपने एचआईपीसी निर्णय बिंदुओं पर पहुँचने वाले देशों की संख्या में वृद्धि तथा अपने एचआईपीसी समापन बिंदुओं तक पहुँचने वाले देशों की संख्या में वृद्धि।
43	एचआईपीसी पहलकदमी के तहत वचनबद्ध ऋण–राहत सहयोग की मात्रा में (अमेरीकी डॉलर में) वृद्धि।
44	सामान एवं सेवाओं के निर्यात के हिसाब से ऋण–अदायगी की प्रतिशत मात्रा में कमी।
<u>लक्ष्य 16</u>	*विकासशील देशों की सहायता से युवाओं के लिए गरिमापूर्ण एवं बेहतर कार्य की प्राप्ति के लिए रणनीति बनाकर लागू करना*
<u>प्रगति संकेतक</u>	
45	युवाओं व युवतियों, दोनों में बेरोज़गारी की दरों में कमी।
<u>लक्ष्य 17</u>	*औषधीय कम्पनियों की सहायता से विकासशील देशों में अत्यावश्यक व सस्ती दवाईयों का प्रबंध करना*
<u>प्रगति संकेतक</u>	
46	टिकाऊ आधार पर अत्यावश्यक दवाईयाँ प्राप्त करने वालों के अनुपात में वृद्धि।
<u>लक्ष्य 18</u>	*निजी क्षेत्र के सहयोग से नई तकनीकों, विशेषकर सूचना व दूरसंचार, के लाभ लोगों को उपलब्ध कराना*
<u>प्रगति संकेतक</u>	
47	प्रति 100 व्यक्ति/टेलीफोन लाइनों व सेलफोन ग्राहकों की संख्या में वृद्धि।
48	प्रति 100 व्यक्ति/व्यक्तिगत कम्प्यूटर तथा इंटरनेट का उपयोग करने वालों में वृद्धि।